इकाई 10 पाश्चात्य : उदारवादी और मार्क्सवादी

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा के लक्षण
10.3 उदारवादी परम्परा बनाम मार्क्सवादी परम्परा
10.4 उदारवादी परम्परा के रूपान्तरण
10.4.1 क्लासिकी उदारवाद
10.4.2 नया उदारवाद
10.4.3 इच्छा स्वातंत्र्यवाद
10.4.4 समतावादी उदारवाद
10.4.5 अन्य उदारवादी रूपान्तर
10.4.5.1 देश विशिष्ट उदारवादी परम्पराएँ
10.4.5.2 संयुक्त राज्य अमेरिका में उदारवाद
10.4.5.3 महाद्वीपीय यूरोप में उदारवादी परम्परा
10.4.5.4 भारत में उदारवादी परम्परा
10.4.5.5 संयोजन में उदारवादी
10.5 मार्क्सवादी परम्परा के रूपान्तर
10.5.1 मार्क्सवाद
10.5.2 लेनिनवाद
10.5.3 माओवाद
10.5.4 अन्य मार्क्सवादी रूपान्तर
10.5.4.1 पाश्चात्य मार्क्सवाद
10.5.4.2 लैटिन अमेरिकी उदारवाद
10.5.4.3 भारतीय मार्क्सवाद
10.6 सारांश
10.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें
10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई में उदारवादी मार्क्सवादी परम्परा पर चर्चा की गई है जो साथ रहते हुए और विश्व भर में फैले हुए उन सिद्धान्तों, सार्वजनिक संस्थाओं तथा पृथाओं को प्रस्थापित करने और संरक्षण की प्रतीक थी, जो उल्लेखनीय रूप से अन्य राजनीतिक परम्पराओं से भिन्न था। अलग-अलग लेने पर, वे विगत दो शताब्दियों में विश्व में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वैचारिक विघटन की प्रतीक थी। इस इकाई से गुज़रने के बाद आप निम्न के बारे में जान पाएँगे :

- कुल मिलाकर उदारवादी मार्क्सवादी परम्परा के लक्षण;
- मार्क्सवादी परम्परा से उदारवादी परम्परा का सीमांकन;

- उदारवादी परम्परा की महत्त्वपूर्ण, विभिन्न अभिव्यक्तियों की पहचान;
- मार्क्सवादी परम्परा की महत्त्वपूर्ण, विभिन्न अभिव्यक्तियों की पहचान; और
- इन परम्पराओं द्वारा राजनीतिक सिद्धान्त और प्रथा पर छोड़े गए प्रभाव पर सुझाव देना।

10.1 प्रस्तावना

कोई भी परम्परा व्यापक रूप से (सहभाजित) उन विचारों, विश्वासों और प्रथाओं का निकाय है, जो परम्परागत हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी उनकी निरन्तरता बनी रहती है, ऐसा विश्वास है। एक परम्परा कुछ सीमा तक स्वीकृत होती है और उस विचारधारा के सापेक्ष में सार्वजनिक स्थल है, जिसमें विभाजन और समर्थन अन्तर्ग्रस्त होते हैं। तथापि, एक विचारधारा, व्यापक आधार होने पर एक परम्परा बन सकती थी और कभी-कभी समर्थन के लिए कोई परम्परा ने कुछ घटकों को अलग करके तथा शेष की अनदेखी करके एक विचारधारा बन सकती थी।

प्रायः हम उदारवादी राजनीतिक परम्परा को मार्क्सवादी राजनीतिक परम्परा के मुकाबले पर खड़ा हुआ पाते हैं। कई पहलुओं पर इन परम्पराओं की मुख्यधारा की अभिव्यक्तियाँ महत्त्वपूर्ण रूप से एक-दूसरे से भिन्न हैं जिससे ऐसी स्थिति को न्यायसंगत ठहराया जा सके। तथापि, जो इन दो परम्पराओं के बीच सहयोजित हैं, उससे वे एक जैसी अथवा पूर्ववर्ती की तरह प्रतीत होती हैं। इससे उदारवादी सम्बन्ध में, कई ऐसे मुद्दे आपके चिन्तन के विषय हैं जो इन दो परम्पराओं के बीच सहयोजित मार्क्सवादी परम्परा को एक साथ लेने का औचित्य नज़र आता है। स्वयं उनके सम्बन्ध में भी उनके बीच सहभाजित दार्शनिकतावादी, ज्ञान मीमांसीय विशाल स्थान और पर्याप्त अनुबन्ध भी हैं।

जहाँ ऐसा बहुत कुछ है जो उदारवादी मार्क्सवादी परम्परा को एक अविछिन्नक बनाता है, वहीं उनके बीच प्रमुख दरारें और उनसे उद्भूत महत्त्वपूर्ण मतभेद भी हैं। वास्तव में, मतभेदों की सीमा उनकी विशिष्ट प्रवृत्तियों के आर-पार बदलती रहती हैं। इसीलिए, उनमें से प्रत्येक को एक स्वतंत्र परम्परा के रूप में माना जा सकता है।

एक तरफ उदारवादी परम्परा तथा दूसरी तरफ मार्क्सवादी परम्परा का गठन कैसे होता है? इन परम्राओं में से किसी एक अथवा एक साथ लेकर दोनों की सीमाएँ अवधारित करना मुश्किल है, यद्यपि इस बात पर अधिक असहमति नहीं हो सकती उनकी सापेक्ष मौलिकता का निर्माण किससे होता है। तथापि, उनके संघटकों पर थोड़ी सहमति है जो परस्पर सर्वांगसम है और वे संघटक भी हैं, जो एक को दूसरे से अलग रखते हैं।

इसके अतिरिक्त परम्पराएँ होने के नाते, न कि मात्र सिद्धान्त, उदारवादी और मार्क्सवादी परम्पराएँ अभ्यावर्तक (inclusive) हैं जिनके क्षेत्र के भीतर एक बड़ी संख्या में मुद्दों और चिन्तनों पर उनके सापेक्ष सिद्धान्तों के समीक्षात्मक रूप से प्रतिबिम्बित विचार; इन परम्राओं को बनाए रखने वाले लोगों की आदतें और चित्तवृत्तियों (Concerns); विश्व के वे विचार शामिल हैं जो जीवन के उन मार्गों पर आधारित हैं अथवा उनका समर्थन करते हैं जिनपर वे फल-फूल रहे हैं। परम्पराओं के रूप में वे इससे पहले कि हम उनका पूरी तरह अथवा कुछ भाग अथवा उनके संघटकों को अधिरोपित करने अपनी विचारित पसन्द बनाएँ, सार्वजनिक जीवन में विलय हो जाती हैं और बिना विचारे हुए तरीकों से मूर्त्त रूप धारण करती हैं।

10.2 उदारवादी-मार्क्सवादी परम्पराओं के लक्षण

हम उन लक्षणों की पहचान कर सकते हैं जो कुल मिलाकर उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा के रूप में सार्वजनिक हैं। वे परम्परा के आस-पास सहभागी होते हैं, यद्यपि वह तरीका

जिससे हम परम्परा की सीमा निर्धारित करते हैं और उसके भीतर आन्तरिक दरारें पैदा करते हैं, इन लक्षणों के हमारे संदर्श को प्रभावित कर सकता है।

उदारवादी मार्क्सवादी परम्परा विशिष्ट रूप से आधुनिक सभ्यता का एक अंग है और परिणामतः, इसके कुछ केन्द्रीय परिसरों में सार्वजनिक रूप से शामिल होती है। यह सभ्यता, कभी-कभी, पूर्व-आधुनिक सभ्यताओं के संदर्शों और संघटकों से, व्यवस्थागत और पर्याप्त रूप से, संयोजित होने का प्रयास करती है। कभी-कभी विगत में जाकर इस परम्परा के पूर्व-इतिहास का निर्माण करने का प्रयास भी किया जा सकता है। पश्चिम में कुछ विद्यार्थियों ने ग्रीकों और आरंभिक ईसाइयत से उदारवादी और मार्क्सवादी विचार जीवनयापन के तरीकों के संघटक तलाश किए हैं। इसी प्रकार, भारत में विद्यार्थियों ने बुद्ध धर्म में इस परम्परा के मज़बूत अवशेष प्राप्त किए हैं। तथापि, इससे यह परम्परा पूर्व-आधुनिक नहीं बन जाती, अपितु यह विगत से आवश्यक रूप से आधुनिक रहते हुए इसकी परतों से समान संघटक प्राप्त करती है।

उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा सामूहिक मानवीय अनुभव, कारण और तर्क-वितर्क पर आधारित है, जो रीति-रिवाज़, प्रयोग, सत्ता और ईश्वरीय ज्ञान पर आधारित पूर्व-आधुनिक राजनीतिक परम्परा से काफी अधिक आगे है। उदाहरण के लिए, मध्ययुगीन ईसाई परम्परा ने सत्य तक ले जाने वाले अपूर्वतः विशेषाधिकृत स्थल के रूप में ईश्वरीय प्राकट्य को देखा। मार्क्सवादी उदारवादी परम्परा सोच करती है कि सार्वजनिक वस्तु के निर्माण का सम्बन्ध है, ईश्वरीय प्राकट्य राज्य का स्रोत नहीं हो सकता और इसकी प्रतिस्पर्धी संकल्पनाएं अपनी निजी जानकारी के बारे में प्रतिक्रियात्मक होते हुए, उदारवादी और मार्क्सवादी परम्पराएँ पर रोक नहीं लगा पाई और इस प्रक्रिया में, अपनी निजी स्थितियों का पुनर्निरूपण करना पड़ा और वह भी ज़ोरदारी से कई बार। उन स्वतंत्रताओं ने, जो इन परम्पराओं के प्रति वचनबद्ध थीं जैसे लक्षण, अभिव्यक्ति, जानकारी और सूचना तक पहुँच आदि, अनिवार्यतः विश्वासों और मूल्यों के बहुवाद के लिए दरवाज़े पूरी तरह खोल दिए जो स्वतंत्र जाँच के अनुरूप थे। इस प्रकार, प्रतिक्रियात्मक जानकारी और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से विश्वासों और पृथाओं की बाढ़ आ गई।

उदारवादी और मार्क्सवादी कई महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर सहमत हुये। कई पहलुओं पर, वे मानव प्राणी की एक सार्वजनिक संकल्पना और पृथ्वी पर व्यक्ति की केन्द्रिकरता में सहभागी बने। दोनों ने अपने आविष्कारों का बचाव किया। उन दोनों का विश्वास था कि स्वतंत्रता और स्वतंत्रता के लिए प्रेरक राजनीतिक समुदाय ऐसे मूल्य हैं, जिनका जोरदारी से पोषण किया जाना चाहिए। उन्होंने मानव प्राणियों के बीच आवश्यक समानता और एकमात्र भूमिका कि मानव को प्रकृति में खेलने के लिए बुलाया गया है, का समर्थन किया। उन दोनों का विश्वास था कि राजनीतिक भागीदारी महान् समृद्ध जीवन की संभावनाओं को उजागर करती है। अन्ततः मानव प्राणियों को अपने सामूहिक जीवन और भाग्य का प्रभार संभालना है और इस प्रभार को पूर्ण दयालु परमात्मा अथवा सार्वजनिक संस्थाओं को दानस्वरूप नहीं सौंपा जा सकता है। तथापि, वे मुद्दों की समझ और निहितार्थों पर बुरी तरह असहमत हुए। वे प्रतिष्ठानों के प्राथमिकीकरण पर असहमत थे तथा अपने परिणामों को उन्होंने अलग-अलग प्रकार से चित्रित किया। कभी-कभी उनमें से एक ने किसी मुद्दे को अनदेखा रखा, जिसे दूसरे ने महत्त्वपूर्ण करार दिया।

कुल मिलाकर उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा ने जन-साधारण की सकारात्मक भूमिका देखी। वे जनसमुदाय को सक्रिय रूप से राजनीति के क्षेत्र में खींचने के बारे में समुत्साही थे। किन्तु जनसाधारण की संकल्पना कैसे की जाये और वे किस प्रकार अपने को अभित्यक्त करें, इस पर उनमें मतभेद थे। कभी-कभी समय के साथ उनके मत बदलते थे।

उदारवादी, जोकि प्रारम्भ में कुलीनतंत्रवाद और राजनीतिक विघटन के विरुद्ध जनसाधारण की लामबंदी को लेकर उत्साहित थे, उन्होंने एक बार पुनः इस प्रश्न पर अपने पैर घिसटने शुरू कर दिए जब वे सत्ता में थे और शासन के नियम और संविधानवाद की भाषा बोलने लगे। इसी प्रकार, मार्क्सवादियों ने आत्म-शासन की भाषा छोड़ दी और उत्तरदायित्वों की शरण ली, जैसे ही मार्क्सवादी दल सत्ता में आये।

उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा समझदारी पर निदेशित है और लोकसत्ता के आधार, फैलाव और सीमाओं को मात्र अनुकूल बनाने की बजाए निर्धारित कर रही है। कुल मिलाकर राजनीतिक व्यवस्था के अनुकूलन और वह भूमिका जो इसमें अभिनीत होती थी, पूर्व-उदारवादी-मार्क्सवादी परम्पराओं के लक्षण थे।

पूर्व आधुनिक राजनीतिक परम्पराएँ स्थान और समय में सीमित थीं। इसके प्रतिकूल, उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा ने क्रियाविधिक और पर्याप्त रूप से, विश्व के संगठन और पुनर्संगठन के डिज़ाइन संस्थापित किए।

बोध प्रश्न 1

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जांच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) निम्न लक्षण उदारवादी-मार्क्सवादी परम्परा के लिये समान हैं।

i) .....

ii) .....

iii) .....

iv) .....

v) .....

2) मानवीय प्रकृति की उदारवादी-मार्क्सवादी संकल्पना पर चार वाक्य लिखें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

10.3 उदारवादी परम्परा बनाम मार्क्सवादी परम्परा

जहाँ उदारवादी परम्परा और मार्क्सवादी परम्परा, कई मामलों में, उभयनिष्ठ (Common) आधार पर सहभागी हैं, वे एक-दूसरे में विलय नहीं हो सकतीं। उनके बीच महत्त्वपूर्ण मतभेद हैं। इसके अतिरिक्त, ये मतभेद उस समय विशिष्ट रूप ग्रहण कर लेते हैं, जब हम एक परम्परा के अलग-अलग रूपान्तरों की दूसरे के रूपान्तरों से तुलना करते हैं।

उदारवाद मानवीय प्रकृति की एक सापेक्षत, नियत और पूर्णाकिंत धारणा को ग्रहण करता है। मानवीय प्रकृति, इस धारणा में, यौक्तिकता (Rationality) और उस माध्यम से ओतप्रोत है जो इसे पूर्ण बनाता है। दूसरी तरफ, मार्क्सवाद मानवीय प्रकृति को एक ऐतिहासिक उत्पाद के रूप में देखता है। यह सामाजिक रिश्तों जिनमें यह अवस्थित है, की भ्रमित गति में मूर्तिमान होता है और बदले में, उन महत्त्वपूर्ण सामाजिक रिश्तों को कायम रखता है। जबकि मार्क्सवाद मानवीय यौक्तिकता और उसके अभिकरण से इनकार नहीं करता, यह तर्क देता है कि वे प्रचलित सामाजिक रिश्तों द्वारा परिणत होते हैं और उन्हें ध्यान में रखता पड़ता है।

अभिकरण पर बल देते हुए, उदारवादी परम्परा प्रातः मानवीय अस्तित्व की स्वतंत्रता और समान अतीन्द्रीय स्थितियों की ओर उन्मुख होती है और वे विधिक और राजनीतिक व्यवस्था को अधिक प्राथमिकता देते हैं। चूँकि मार्क्सवादी विश्वास करते हैं कि ये मानवीय अभिकरण प्रचलित सामाजिक रिश्तों में फँसे होते हैं, वे आवश्यकता को महत्त्व देते हैं और वे घटक जो उन्हें अहम बनाते हैं, मानवीय प्राथमिकताओं को मूर्त्तरूप देते हैं और उन्हें दिशानिर्देश देते हैं। वे स्वतंत्रता और समानता का विस्तार करने के लिए प्रतिबंधों और रणनीतियों की रचना करते हैं।

मार्क्सवादी एक ऐतिहासिक सिद्धांत के प्रति योगदान करते हैं और तर्क देते हैं कि समाज परिमाणात्मक और गुणात्मक, दोनों परिवर्तनों से गुजरते हैं। पूर्ववर्ती उत्पादक बलों में वृद्धि करता है तथा तदनुरूपी राजनीतिक, विधिगत और सांस्कृतिक बदलाव होते हैं। उत्तरवर्ती प्रचलित सामाजिक तथा राजनीतिक और आर्थिक प्रबंधनों का निरूपण करता है जो ऐसे रिश्तों का समर्थन करते हैं। सामान्यतः उदारवादी सामाजिक अभिकरणों की ऐतिहासिक कथाओं को गंभीरता से नहीं लेते। इसके स्थान पर वे, परिकल्पना के तौर पर, उन्हें तथा समाज और राज्य जिसमें वे रहते हैं को सक्षम बनाते हैं, जिससे मानव प्राणी के कतिपय लक्षणों को विशेष रूप से दर्शाया जा सके, जैसाकि हॉब्बस अथवा लौक सामाजिक संविदा के गठन से पहले करते हैं।

उदारवाद वास्तविकता को समझने के लिए मानवीय दिमाग के प्रति और अधिक पूर्वाभिनय (Assume) करने के लिए अभिमुख होता है। मार्क्सवाद उसके व्यक्तिपरक मूल्यांकन की बजाए वस्तुपरक यथार्थता के क्षेत्र को सीमित करना चाहता है। इसके अतिरिक्त, यह उत्तरवर्ती के मुकाबले पूर्ववर्ती को प्राथमिकता देता है। तथापि, मार्क्सवाद इस बात से सहमत है कि विचार जब वे पृथाएँ बन जाते हैं अथवा लोगों के दिल और दिमाग पर काबू कर लेते हैं, स्वतंत्र अधिकारक बन सकते हैं।

उन संकल्पनाओं और वर्गों (Categories) में उल्लेखनीय अंतर है, जिनका प्रयोग मार्क्सवाद सामाजिक विश्लेषण और ऐडवोकेसी के लिए करता है; उदावाद की तुलना में। उदारवाद के लिए संकल्पनाएं और वर्ग, जैसे कि''मानवीय'' अधिकार और स्वतंत्रता, असैनिक समाज, प्रतिनिधित्व, शक्तियों का पृथकीकरण, जनमत, न्याय और समानता उसके निरूपण के प्रति संकेन्द्रिक हैं। तथापि, मार्क्सवाद का अपना फ्रेमवर्क संकल्पनाओं के निकाय के रूप में है, जैसे वर्ग और वर्ग संघर्ष, उत्पादन की स्थितियाँ, उत्पादन गठजोड़ और उत्पादक बल, आधार और बृहद ढांचा अधिक विनियोग, राज्य क्रांति और संक्रमण।

मार्क्सवाद समाज की मौलिक इकाइयों के रूप में सामाजिक वर्गों पर बल देता है। यह व्यष्टि अभिकरण को पूरी तरह कम नहीं आँकता, अपितु सामाजिक वर्गों के प्रति ऐतिहासिक भूमिका आरोपित की जाती है। कुल मिलाकर, उदारवाद, व्यष्टिगत युक्तिसंगत अभिकर्ता को विशेषाधिकार प्रदान करता है और उसको सार्मथ्य देता है कि वह स्वतंत्र निर्णय ले और अपना जीवन व्यतीत करे।

मार्क्सवाद एक वर्ग विभाजित समाज में चल रही प्रक्रियाओं की ओर ध्यान आकर्षित करता है, जो मानव जीवन के विकास पर रोक लगाता है और उसे विकृत कर देता है तथा मानव प्राणियों को समृद्ध संभावनाओं अथवा उनके जीवन पर अन्वेषण करने से वंचित रखता है। सामान्यतः उदारवाद व्यक्तियों को सहभागी आकांक्षाओं के सीमित क्षेत्र तक बांधे रखता है और उन्हें जिस प्रकार के इंसान वे बनना चाहते हैं, अपनी स्वतंत्रताओं का प्रयोग करते हुये उसके लिए आजाद छोड़ देता है।

कुल मिलाकर, उदारवाद की तुलना में मार्क्सवाद मानव कार्यों और प्रकृति से उनके संबंध के एक व्यापक विश्लेषण प्रदान करने के लिए अग्रसर होती है।

मार्क्सवाद इतर-विश्व (Other worldly) नहीं है। यह विश्व को हमारे अंत और उद्देश्यों के बारे में आगाह करता है। तथापि, इसमें कतिपय आध्यात्मिक तलाश शामिल है क्योंकि यह वस्तुओं को स्वतंत्र रूप से अवधारित करके स्वयं की समृद्ध रचना निर्धारित करता है। जहाँ उदारवाद के भीतर परिव्याप्त विचारों की लड़ी है, जो इस विश्व में मानवीय संघर्ष को सीमित करती है, यह मानव प्राणियों के लोकोत्तर और इतर-विश्व के संघर्षों को समायोजित करने के लिए अधिकाधिक खुला है। उदारवाद आसानी से आध्यात्मिक तथा विश्वेतर तलाश के लिए अधिक स्थान उपलब्ध करता है।

मार्क्सवाद ऐसी स्थिति का समर्थक है जहाँ कोई शोषण न हो और जहाँ समुदाय की संरचना स्वयं की समृद्ध स्थिति के साथ-साथ चलें। इसका ऐतिहासिक सिद्धांत एक पूँजीवादी समाज में जो इस प्रकार के अंत की ओर अग्रसर हो, वर्ग संघर्ष के तरीके पर विचार करता है। उदारवाद विभिन्न प्रकार की असमानताओं का समर्थन करते समय स्वतंत्र इच्छा के साथ उनका सतुंलन बनाए रखने का प्रयास करता है। अशोषण और अप्रपीड़न पर आधारित समाज के पीछे संघर्ष करने की बजाए विद्यमान समाज का सुधार करना इसका लक्ष्य है। समुदाय उदारवादी कल्पना की संकेन्द्रिक नहीं है। तथापि, विचारों के एक विशिष्ट निकाय के रूप में समुदायवाद के उदय से, उदारवाद बड़े तौर पर समुदाय तक पहुँचने का प्रयास कर रहा है।

मार्क्सवादियों के पास संक्रांतिक निरूपण (Revolutionary Transformation) की एक भलीभाँति संरचित और भावप्रवण संकल्पना है। उदारवादी विद्यमान मानवीय स्थितियों को शाश्वत और स्थायी बनाने के लिए प्रवृत्त होते हैं और यदि वे राजनीतिक सुधारवाद को अंशदान करते हैं, यह अंतिम प्रयास के रूप में संकीर्णता से परिगत होता है। मार्क्सवादियों के लिए संक्रान्तिक निरूपण को सामाजिक रिश्तों में बदलाव के हिसाब से कार्यसूची में स्थान दिया जाता है, जबकि उदारवादियों के लिए यह अधिकारों और न्याय की रक्षा में नैतिक कार्रवाई है।

मार्क्सवादी और उदारवादी राज्य की भूमिका और आवश्यकता की संकल्पना पर एक-दूसरे से मतभेद रखते हैं। उदारवादी राज्य को अपरिहार्य बुराई के रूप में स्वीकार्य करते हैं। इसको नकारने से इसे भोगने की अपेक्षा अधिक हानि होती है। मार्क्सवादी समाज में अखंडनीय वर्ग प्रतिरोधवाद की स्थिति में उद्भूत एक ऐतिहासिक उत्पाद के रूप में राज्य को मानते हैं। समाज का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हुए, यह समाज के ऊपर शासन करता है और अभिभावी वर्गों के हितों को सुनिश्चित करता है। वे तर्क देते हैं कि राज्य वर्ग संघर्षों और वर्ग संबंधों के विघटन से मलीन हो जाएगा।

उदारवाद ने ऐतिहासिक रूप से पूँजीवाद के साथ निकट का रिश्ता कायम किया है। उदारवाद के कतिपय रूपान्तर जैसे उत्कृष्ट उदारवाद, पूँजीवाद के विकास के शुरुआती चरणों के साथ निकटता से अंतर्ग्रसित हैं। उदारवाद की कतिपय प्रवृत्तियाँ, जैसे विधि के

समक्ष व्यापार और व्यवसाय की स्वतंत्रता तथा समानता पूँजीवाद के लिए किसी मामले में तर्क देने के लिए प्रभावी रूप से नियोजित की जाती हैं। सामान्य मानवीय स्थितियों और सहभाजित नागरिकता को अपनी अपील करके, यह वर्ग संबंधों की अनदेखी करता है और उसके द्वारा वर्ग संघर्ष अभिभावी बना रहता है। यद्यपि उदारवाद को पूँजीवाद से अलग रखा जा सकता था, ऐसा करने में इसे, कम से कम अभी तक, सफलता नहीं मिली है क्योंकि जिस तरह के अधिकारों का वायदा किया जाता है, वो अधिकार उत्पादक संसाधनों की अपेक्षा निजी अधिकारों की अधिक महत्त्व देते हैं। वास्तव में, मार्क्सवाद पूँजीवाद के उन्मूलन के प्रति वचनबद्ध है और आधुनिक समाज की अधिकांश बुराइयों को देखता है, जो उसके पूँजीवाद के साथ संबंध के कारण हैं।

उदारवादी रूपांतरों की तुलना में मार्क्सवाद के विभिन्न रूपांतरों के बीच प्रमुख मतभेद भी हैं। मार्क्सवादी परम्परा के कई बार के रूपांतरों ने स्वयं को अपने प्रवर्त्तक पूर्वजों की सम्पत्ति के विश्वस्त धारकों के रूप में माना। लेनिनवाद ने मार्क्स और एंजिलस के अनन्य वारिस होने का दावा किया। इसी प्रकार, माओवाद ने स्वयं को मार्क्स, एंजिल्स और लेनिन की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी घोषित किया। तत्पश्चात्, उदारवादी रूपांतरों में मुश्किल से स्वयं को पूर्ववर्त्ती रूपांतरों के विश्वस्त स्वरों के रूप में दावा करते हैं। वे दार्शनिक और नैतिक सहज संबंध का दावा करते हैं न कि वफादार निरन्तरता का।

मार्क्सवाद के विभिन्न रूपांतरों पर उदारवादी रूपांतरों की तुलना में एक विशिष्ट विचारक की गहन रूप से छाप लगी है। अतः मार्क्सवाद की विशिष्टता प्रायः उनके प्रसिद्ध प्रवर्त्तक के नाम पर चलती है।

मार्क्सवाद परंपरा में, यद्यपि अनुवर्ती ने परंपरा की अनन्य वसीयत का स्वयं के लिए दावा किया, वे वस्तुतः वृद्धिगत रूप से अनन्य हो गए। इस छवि के साथ कि यह प्रामाणिक की प्रतीक थी, सहयोजित इस प्रकार की अनन्यता से दावा करने वालों के बीच में संघातिक संघर्ष हुए। तथापि, उदारवादी परम्परा ने आंतरिक मतभेदों और संघर्षों पर एक बड़ी कार्रवाई की अनुमति दी। एक की जीत से दूसरे का उन्मूलन संभव नहीं था। मार्क्सवादी रूपांतर, सभी का प्रतिनिधित्व करने के उनके दावे के बावजूद, सीमित हो गए, जबकि उदारवादी रूपांतर परंपरा के सच्चे और विशाल धारकों के रूप में आवश्यक रूप से स्वयं की दावेदारी के बिना, विशाल परम्परा कायम करने में सक्षम थे।

बोध प्रश्न 2

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जांच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) उदारवादी और मार्क्सवादी परम्परा के बीच पाँच महत्त्वपूर्ण अंतर लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) मानव स्वतंत्रता के प्रति उदारवादियों और मार्क्सवादियों के बीच अंतर बताते हुए तीन वाक्य लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

10.4 उदारवादी परम्परा के रूपान्तरण

उदारवादी परंपराओं में अनेक परिवर्तन हुए, क्योंकि इसके सह-सयोजकों (internal Coordinates) ने चुनौतियों और समालोचनाओं के परिणामस्वरूप विभिन्न महत्त्वपूर्ण महत्ता प्राप्त कीं। इसमें अतिरिक्त, इससे अनेक क्षेत्रीय परिवर्तन हुये, इसकी विविध विचारधारा और सामाजिक संदर्भों के अन्तरपृष्ठ के कारण।

10.4.1 क्लासिकी उदारवाद

जॉन लॉक (1632-1704), जहाँ तक इस रूपांतर का संबंध है, एक केन्द्रीय आकृति है। उसका विचारों और मनोभावों के एक सापेक्षतः संसक्त निकाय के साथ, विलय हुआ। इसने अब तक अभ्यस्त तरीकों की तुलना में उल्लेखनीय विभिन्न तरीकों से सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रिया के मार्ग की ओर उन्मुक्त किया और उसका दिशा निर्देशन किया। इसने विभिन्न मानदंडों और मूल्यों को लोगों के मन में बिठाया और उन्हें प्रोन्नत किया। इसने लोक संस्थाओं के लाक्षणिक गुणों का वर्णन किया तथा उन्हें अपने स्वयं के सिद्धांतों की संतीक्षा (Scrutiny) के अधीन कर दिया। इसने इसके विचारों और मनोभावों द्वारा उत्प्रेरित जीवन की राह और आम जानकारों को लोकाचार बनाने का प्रयास किया। इसने इस कार्यसूची को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरक तत्त्वों को पुनः प्राप्त करने की चेष्टा की और इसके लिए, उपलब्ध वसीयतों (Legacies) पर ध्यान दिया।

क्लासिकी उदारवाद ने कतिपय व्यष्टिगत अधिकारों जैसे जीवन, स्वतंत्रता और सम्पत्ति और सम्पत्ति पर ध्यान दिया, जबकि इन अधिकारों की बोधगम्यता पर महत्त्वपूर्ण मतभेद थे, प्राकृतिक नियम जिसने मानवीय सत्ता को सूचित किया, की अभिव्यक्ति के रूप में उनकी बोधगम्यता के लिए प्रबल प्रवृत्ति थी। कई विचारकों, जिन्होंने इस रूपांतर को स्वीकार किया था, का तर्क था कि मानव सत्ता को समाज में बदला गया तथा उसे एक सामाजिक संविदा के माध्यम से एक सार्वजनिक इच्छा और प्राधिकार के तहत नियंत्रित किया गया। इस प्रकार के रचना विन्यास में, मानवीय प्रकृति को संघात्मक बंधनों और संबंधों में और के माध्यम से गठित करने के बजाए पूर्व-सामाजिक के रूप में ग्रहण किया गया। मानवीय प्रकृति को इस रूपांतर के द्वारा एक समय रहित और सार्वभौमिक मानदण्ड के माध्यम से एक ऐतिहासिक और संदर्भाधीन एकांतवास से हटाकर एक रूप दिया गया। क्लासिकी उदारवाद, विशेषकर इसके रूपांतर का विश्वास था कि निजी सम्पत्ति नागरिक समाज द्वारा पैदा नहीं की गई थी, अपितु वह इससे पहले नागरिक समाज और राज्य को इसमें हस्तक्षेप का कोई अधिकार नहीं था। इस रूपांतर में, स्वतंत्रता में प्रतिरोध न होने की स्थिति में नकारात्मक अनुभव के रूप ग्रहण की गई थी।

क्लासिकी उदारवाद ने नागरिक समाज और राज्य को मूल रूप से अधिकारों के संरक्षक के रूप में देखा। अतः राज्य कुछ अन्य मूल्यों को प्रोन्नत करने के नाम पर अधिकारों में दखल नहीं दे सकता था, अथवा अधिकारों के क्षेत्र पर सीमा अधिरोपित नहीं कर सकता था, जब तक अधिकारों के संरक्षण को स्वयमेव ऐसी दखलंदाजी की आवश्यकता न हो। इसने एक सीमित शासन का समर्थन किया। इसने शासन को सीमाओं के भीतर रखने के लिए कई तरीकों का प्रस्ताव किया। अधिकारों के क्षेत्र ने एक नागरिक समाज को जन्म दिया जो कि विभिन्न संघों और समूहों से बना था और राज्य की गतिविधि पर निरन्तर नियंत्रण और निगरानी रखता था। विभिन्न स्वतंत्रताओं के होने से नागरिक समाज शासन के विभिन्न अंगों पर अविरल और सतत निगरानी रखने में सक्षम हुआ। एक प्रतिनिधि विधायिका, शक्ति का पृथकीकरण, सार्वजनिक प्राधिकार का फैलाव सुनिश्चित करना और आवधिक निर्वाचन इस रूपांतर के मनोभाव के केन्द्र में थे। इसने बहुमत के शासन की बजाए बहुमत की सहमति स्वीकार की। इसने अपने मत के द्वारा अपनी प्रतिनिधिक-प्राथमिकता को व्यक्त करने के लिए प्रत्येक प्रौढ़ की अपेक्षा की। वास्तविक प्रतिनिधित्व, अर्थात्, इस प्रकार कार्य करने के लिए हकदार लोगों का प्रतिनिधित्व, पर्याप्त था।

इस रूपांतरण का आर्थिक प्रतिस्थायी युक्त बाज़ार और अहस्तक्षेप नीति थी। वस्तुतः, उत्कृष्ट उदारवाद प्रशंसनीत तौर पर उभरते हुए नागरिक वर्ग के लिए निजी सम्पत्ति पर अपने स्वभावगत बल, सीमित और औपचारिक स्वीकृत स्वतंत्रता तथा व्यापार की स्वतंत्रता पर बल के साथ एक विचारधारा के रूप में रास आया। बाज़ार में अभिव्यक्त विनिमय की स्वतंत्रता विनिमय दर उत्पाद के उचित मूल्य नियत करने के लिए वांछित थी। इसके अर्थानुसार, राज्य को मुकाबले रखा गया था।

10.4.2 नया उदारवाद

नये उदारवाद के कई विचार, जिन्होंने स्वयंमेव 19वीं शताब्दी के अंत तक उदारवाद के एक विशिष्ट रूपांतर के रूप में समेकन किया, आरंभ में ज़ौं ज़ाक रूसो (1712-1778) द्वारा व्यवस्थित किए गए। उनके लिए स्वतंत्रता मात्र चुनिन्दा स्वतंत्रता नहीं थी, अपितु लोगों की रचनात्मक योग्यता है जो मानव की सत्ता को महसूस कर सके। समुदाय के कार्यों में भागीदारी से किसी एक की जिम्मेदारी पर एकमात्र संसाधन, जिसकी समाज-पूर्व राज्य में मौजूदगी दर्ज की जा सकती थी, के प्रति सामूहिक संसाधनों को रखकर पर्याप्त रूप से रचनात्मक संभावनाओं का विस्तार किया। राजनीतिक समुदाय और उसकी प्रक्रियाओं में सहभागिता से वास्तविक इच्छा को तलाश करने तथा विगत और विलम्बित विशेषाधिकारों की आकस्मिकताओं को बहा देने की क्षमता आई।

नया उदारवाद, जर्मन ज्ञान जागरण (Enlightenment) के विचार, विशेषकर, एम्मैनुएल कान्त और एफ. डब्ल्यू. जी. हेगल के विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुआ। कान्त ने एक वास्तविक, और बुद्धिपरक व्यक्तित्व, जिन्हें वह इन्द्रियों द्वारा उत्तेजित किए जाने पर इच्छाओं द्वारा प्रेरित-एक उन्नत और एक अवनत व्यक्तित्व के रूप में मानते थे, के बीच अंतर किया। उन्नत आत्मा स्वतंत्रता का सही मार्ग था। कान्त के लिए सच्ची स्वतंत्रता पराधीनता की अधीनता से स्वतंत्रता थी। कान्त ने लिखा, ''ऐसी स्वतंत्रता कठोरतम स्थिति अर्थात् लोकोत्तर भाव से स्वतंत्रता'' कही जाती है।

यह शुद्ध स्वायत्त बुद्धिपरक इच्छा की स्वतंत्रता है, जो सही तौर पर शुद्धतः औपचारिक नैतिक नियम जो स्वयं पर लागू किया जाता है, के अनुसार है। रुचि की संतुष्टि अथवा सीमाओं की बाधा ऐसी स्वतंत्रता पर बाधा नहीं है। अपितु प्रत्येक ऐसी बात है, जो शुद्ध कारण के आधार पर नैतिक जीवन में बाधा डालती है। हेगल ने कान्त की स्वतंत्रता को

एक सामाजिक और राजनीतिक अभिव्यक्ति देने की माँग की। उसका तर्क था कि विशेष और सीमित प्रयत्न के क्षेत्र में अभिव्यक्त स्वतंत्रता स्वयमेव स्वतंत्रता के रूप में भ्रमित करती है। उन्होंने तर्क दिया :

> ''राज्य, एक सम्पूर्ण नैतिकता है, जो वास्तविकता का वह स्वरूप है जिसमें व्यक्ति की अपनी स्वतंत्रता होती है और वह उसका आनन्द लेता है, परन्तु उसके पहचाने जाने की शर्त पर, उस पर विश्वास करके यह इच्छा करनी पड़ती है जो सर्वनिष्ठ है।''

थॉमस हिल ग्रीन (1836-1882) ने नये उदारवाद रूपांतर की रचना विन्यास किसी अन्य की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित किया। उन्होंने राजनीतिक समुदाय की गुणवत्ता और उसकी संस्थाओं की ओर ध्यान आकर्षित करके उत्कृष्ट उदारवाद की शब्दावली को उलट क्रम में करने का प्रयास किया, जिससे उस तरह की प्राथमिकता के लिए सक्षम हो जाएँ जो वैसा करना चाहे/ उनका तर्क था कि ऐसा समुदाय जिसका अपना कानून और शासन है और जो ताकत पर विश्वास नहीं करता अपितु अपने नागरिकों की सहमति पर विश्वास करना है, स्वतंत्रता के लिए अपरिहार्य शर्त है। ऐसे समुदाय के सदस्य एक-दूसरे के प्रति आभार महसूस करते हैं और यह ऐसे चिन्तन और समर्थन हैं, जिससे कोई भी उस प्रकार की रुचियाँ कर सकता है जो वह चाहता है। इस अनिवार्यता के अधीन नागरिक राज्य और अन्य नागरिकों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को स्वीकार करते हैं, क्योंकि इस प्रक्रिया में उनके निजी जीवन और स्वतंत्रता में सम्मान प्राप्त होता है और उसे प्रोन्नत किया जाता है।

नए उदारवादियों के लिए स्वतंत्रता ऐसा मूल्य है, जिसका पोषण किया जाना चाहिए। तथापि, इस प्रकार के मूल्य को बनाए रखने के लिए विशेष प्रकार का राज्य और समाज पूर्व शर्तें हैं। स्वतंत्रता के लिए नैतिक रूप से निर्मित व्यष्टियों की आवश्यकता होती है और सामाजिक संस्थाएँ ऐसे व्यष्टियों का निर्माण संभव बनाती है। ये संस्थाएँ वस्तुतः अपने सदस्यों के क्रियाकलाप की अभिव्यक्ति हैं।

ग्रीन की व्यवस्था में अधिकार और कानून स्वतंत्रता के अंतरंग थे। अधिकार उन स्वतंत्रताओं की रक्षा करते हैं, जिसे व्यष्टि और सामाजिक ग्रुप अपने लिए दावा करते हैं और उसकी दूसरों को संस्वीकृति देते हैं। कानून में, राजनीतिक हितों से ऊपर उठ रहे हैं और प्रतिबंधों को लागू कर रहे हैं। विधितंत्र नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करता है। राज्य बाधाओं को दूर करता है और नैतिक विकास के पक्ष में हालात तैयार करता है। राज्य एक समाज के मात्र सरकारी और कानूनी संस्थाएँ ही नहीं है, अपितु नागरिकों और स्वतंत्र संघों को शामिल करता है, जो शासकीय निर्णयों और नीतियों के निर्माण और कार्यान्वयन में भागीदारी निभा रहे हैं।

नये उदारवाद ने मानव स्वभाव को काल रहित होने की बजाए गतिपूर्ण होने के लिए पुनःसंकल्पना की। मानव स्वभाव विशिष्ट प्रकार के नियमों द्वारा सुगठित अथवा कुगठित होता है तथा उस पोषण का समर्थन करता है तथा बदले में उसका और उन नियमों का पोषण करता है, उस प्रकार की माननीय सत्ता को प्रतिबिम्बित करता है जो उनको स्थायित्व प्रदान करती हैं।

नये उदारवाद ने आर्थिक प्रतिरोधवादी नीतियों, कल्याण उपायों और धन के पुनः वितरण के लिए मार्ग खोल दिया। इसमें बेरोज़गारी और गरीबी की समस्याओं से निपटने के लिए दलीलें और न्याययुक्तता मुहैया कराई गई। उसने और अधिक समानतावाद तथा सहकारी समाज की माँग की। ह्रष्ट-पुष्ट नागरिक वर्ग के निर्माण के लिए पूर्वापेक्षा के रूप में संस्थाओं के स्वास्थ्य पर नए उदारवादियों द्वारा ज़ोर देना एक राज्य के निर्माण के लिए एक शक्तिशाली स्पंदन था।

10.4.3 इच्छा स्वातंत्र्यवाद

विगत तीन दशकों में, अर्थव्यवस्था और समाज में राज्य की भूमिका को सीमित और परिगत करने तथा बाज़ार की भूमिका का मूल्यांकन करने के लिए सतत प्रयास किया गया है। इससे उदारवाद का इच्छास्वातंत्र्यवाद नामक एक रूपस्तर प्रचलन में आया है। यह स्वतंत्रता बनाम अन्य मूल्यों की प्राथमिकता का दावा करता है। यह उदारवाद की बाज़ार के अस्तित्व के साथ अनुक्षेप सीमा तक संकीर्ण बनाता है, जिसमें यह स्वतंत्रता का मूर्त्त रूप देखता है। इच्छास्वातंत्र्यवाद के कुछ प्रसिद्ध वक्ता हैं रॉबर्ट नॉज़िक, मिल्टन फ्रीडमैन और एच.ए. ह्येक।

इच्छास्वातंत्र्यवादी कल्याणकारी राज्य की तलाश करते हैं जो उनके विचार में 'असीमित' हो चुका है। यह उस समय कार्य करता है, जब उसे पता चलता है कि नागरिकों के लिए क्या अच्छा है, बजाए इसके कि नागरिक निर्णय करें कि उनमें से प्रत्येक के निजी हेतु क्या अच्छा है। यह शासनों के प्रति उन बहुमतों द्वारा संकटापन्न है, जो लूट-खसोट, मुनाफे के विभाजन के लिए विभिन्न ग्रुपों के साथ सौदेबाजी तय करके सत्ता हासिल करने के लिए अपभ्रष्ट कार्यों में लग चुके हैं। बहुमत का शासन विभिन्न अल्पसंख्यक हितों के गठबंधन पर आधारित शासन बन गया है। इच्छास्वातंत्र्यवादी, इस प्रकार, उदारवाद को बहुमत के शासन से अलग करने के लिए संघर्षरत हैं।

ऐसी स्थिति के विरोध में जहाँ सरकारें जैसा उचित समझती हैं, किसी भी प्रकार का कानून बनाने के लिए स्वतंत्र हैं, वहाँ इच्छास्वातंत्र्यवादी इस बात का पक्ष लेते हैं कि लोगों को चयन करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए (मिल्टन फ्रीडमैन और उनकी पत्नी द्वारा एक पुस्तक का शीर्षक 'फ्री टू चूज़' है)। वे एक ऐसे अल्पतम राज्य की माँग करते हैं जो खेल के नियमों को अवधारित करने, उनका पंचाट करने तथा उन्हें लागू करने के लिए पूर्णतः चिन्तित होंगे। वे नैतिक हकदारी को उस राज्य से हटाकर समाज निर्माण करने वाले व्यष्टियों को अन्तरित करना चाहते हैं, जो इस पर स्वयं के लिए अनाधिकार चेष्टा करने लगता है।

सम्पत्ति का अधिकार, जिसे इच्छा स्वातंत्र्यवादी एवं समागम का मामला मानते हैं, उनके द्वारा स्वतंत्रता के मध्य में माना जाता है। एफ.ए. हयेक का कहना था :

> ''जो कुछ हमारी पीढ़ी भूल चुकी है वह यह है कि निजी सम्पत्ति की व्यवस्था स्वतंत्रता के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रतिभूति है, जो केवल उन्हीं के लिए नहीं जो सम्पत्ति के मालिक हैं, अपितु बमुश्किल उनके लिए कम होगी जो इसके मालिक नहीं हैं। इसका कारण यह है कि उत्पादन के साधनों का नियंत्रण स्वतंत्र रूप से कार्यरत लोगों के बीच विभाजित कर दिया जाता है, क्योंकि हमारे ऊपर किसी की पूर्ण सत्ता नहीं है और हम व्यष्टियों के रूप में निर्णय ले सकते हैं कि हमें स्वयमेव क्या करना है।'' (एफ.ए. हयेक, द रोड टू सर्फडम, लंदन, रूट लैज, 1944, पृ.78)

इच्छास्वातंत्र्यवादी स्वतंत्रता, बाज़ार, नीतियों तथा उपायों के दक्ष अनुपालन के मध्य एक अखंडनीय बंधन स्थापित करने का प्रयास करते हैं। वे महसूस करते हैं कि स्वतंत्रता का अस्तित्व अदूरदर्शनीय तथा अप्राक्कथनीय की संभावना छोड़ देता है, जिसके ऊपर विज्ञान और सभ्यता निर्भर करती हैं। वे तर्क देते हैं कि सर्वाधिक उपयोगी ज्ञान वह है जो जन्मजात विकेन्द्रीकृत है और त्वरित अनुयोजन के लिए व्यक्ति के पास उपलब्ध होता है, न कि योजनाकारों के पास। भूमिस्थ स्थिति में परिवर्तनों से व्यापक रूप से निरूपित योजनाएँ अप्रचलित हो जाती हैं। एक व्यष्टि सुसंगत और उचित जानकारी से बेहतर सुसज्जित होता है और उसे कल्याणकारी राज्य लालफीताशाही की अपेक्षा अधिकतम

प्रयोग में लाता है। बाज़ार सुसंगत जानकारी का प्रसारण करके युक्तिसंगत आबंटनीय निर्णयों को सहज बनाते हैं। उनके अनुसार बाज़ार स्वतंत्र अधिकारियों के रूप में जो अपने रणक्षेत्र में स्वयमेव स्वतंत्र रूप से बातचीत करते हैं, बल प्रयोग नहीं कर सकता है। अतः एक स्वतंत्र व्यवस्था के फलने-फूलने के लिए यह पर्याप्त नहीं है कि कानून का शासन प्रचलित रहे, अपितु यह सुनिश्चित करता है कि बाज़ार सहिष्णुतापूर्वक भली-भाँति कार्य करता रहे।

10.4.4 समतावादी उदारवाद

उदारवाद का एक महत्त्वपूर्ण रूपांतर जो हाल के वर्षों में सन्निबद्ध हुआ है, समतावादी उदारवाद रहा है। जॉन रॉल्स की *ए थ्यौरी ऑफ जस्टिस* (1971) और *पॉलिटीकल लिबरलिज़्म* (1893) में प्रस्तुत अग्रणी रचना ने इस परिप्रेक्ष्य के विस्तार के लिए महान् योगदान किया है। *ए थ्यौरी ऑफ जस्टिस* उपयोगितावाद की समीक्षात्मक है, जो लोकनीति और संस्थाओं की निष्पक्षता का निर्धारण करने के लिए निबल सकल संतुष्टियों (Net Aggregate Satisfactions) को नियोजित करता है। राल्स महसूस करते हैं कि ऐसी स्थिति से उस बहुसंख्यावाद जो अधिकारों के द्वारा उपयोगिता को प्राथमिकता नहीं देता, के स्वरूप का समर्थन करने वाली प्राथमिकता से पूर्व अच्छाई का निर्धारण करके और दूसरों की संतुष्टि के लिए मानव व्यक्तियों को सहायक बनाने के लिए प्रवृत्त होने से स्वतंत्रता को कम आँकने का जोखिम बना रहता है।

उपयोगितावाद के सिद्धांत के विरुद्ध और इम्मानुएल कांत के नैतिक सिद्धांत पर कटाक्ष करते हुए रॉल्स तर्क देते हैं कि न्यायप्रिय व्यवस्था ''अपने अंत से पहले स्वयं'' और ''भलाई से पहले अधिकार'' के सिद्धांतों के आधार पर होनी चाहिए। यह स्वयं ही है जो विचारों और रुचियों के माध्यम से व्यक्ति का मार्ग अवधारित करते हुए कतिपय पूर्व-प्रदत्त माना जाता है, चूँकि यह हमारे क्रियाकलाप को निमंत्रित करने वाले कतिपय पूर्व लक्ष्यों के प्रति वचनबद्ध नहीं होता। रॉल्स ऐसे सिद्धांतों के सूत्रीकरण के लिए सामाजिक संविदा युक्ति का आश्रय लेते हैं जिन सिद्धांतों पर अपनी सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं को आधार प्रदान करने के लिए सभी सहमत हो सकते हैं। ये सिद्धांत हैं : (1) प्रत्येक व्यक्ति को सर्वाधिक व्यापक मौलिक स्वतंत्रता, जो दूसरों के लिए समान स्वतंत्रता के अनुरूप हो, का समान अधिकार है, (2) सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रताएँ इस क्रम में व्यवस्थित की जाएँ कि वे दोनों (क) न्यूनतम लाभ प्राप्त को अधिकतम लाभदायक हों तथा (ख) उन कार्यालयों और स्थितियों से जुड़ी हों, जो अवसर की निष्पक्ष समानता के शर्तों के अधीन सभी के लिए खुली हों। इनमें प्रत्येक सिद्धांत के अपने परिमाण होते हैं। प्रथम सिद्धांत विशिष्ट अधिकारों और कर्तव्यों को जन्म देती है जैसे बोलने की स्वतंत्रता, सभा, अंतश्चेतना, (Conscience) व्यक्तिगत सम्पत्ति और मतदान और कार्यालय बनाने के संबंध में राजनीतिक स्वतंत्रता। दूसरा सिद्धांत धन और शक्ति का निष्पक्ष वितरण विनियमित करता है। रॉल्स इन सिद्धांतों के आधार पर एक संवैधानिक, विधिक, न्यायसंगत और नागरिक जीवन का प्रस्ताव करता है।

राजनीतिक उदारवाद में, रॉल्स, को लगता है कि *ए थ्यौरी ऑफ जस्टिस* में उनके द्वारा प्रस्तुत संकल्पना में उन्होंने बहुलता को हिसाब में नहीं लिया है, अपितु जीवन के युक्तिसंगत व्यापक लक्ष्यों की ओर ध्यान दिया है जो आधुनिक लोकतांत्रिक समाज में प्रचलित हैं। इस प्रयोजनार्थ वह निष्पक्षता के तौर पर स्वतंत्र-अचल विचार को न्याय के रूप में देखने का प्रस्ताव करता है जिस पर जिंदगी के युक्तिसंगत तरीके सहमत हैं और उसके हास, एक अतिव्याप्त आमराय पर पहुँचता है। तदनुसार, वह दोनों सिद्धांतों में संशोधन करते हैं जो कि *ए थ्यौरी ऑफ जस्टिस* में एक सीमा तक प्रस्तावित किया। ये सिद्धांत तीन घटकों पर ज़ोर देते हुए उदारवाद के समानतावादी स्वरूप का समर्थन करते हैं और उसकी

अभिव्यक्ति करते हैं। ये तीन घटक हैं : (क) राजनीतिक स्वतंत्रताओं के उचित मूल्य की प्रतिभूति जो उनके शुद्ध औपचारिक मूल्य के अनुरूप नहीं है; (ख) अवसर की निष्पक्ष समानता और (ग) भिन्नता का सिद्धांत जिसके अनुसार सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को समायोजित करना, ताकि न्यूनतम लाभ प्राप्त करने वालों को अधिकतम लाभ उद्‌भूत हो।

10.4.5 अन्य उदारवादी रूपान्तर

10.4.5.1 देश विशिष्ट उदारवादी परम्पराएँ

उदारवादी परम्परा के रूपांतर जिनका हमने ऊपर उल्लेख किया है, विचारों/विश्वासों तथा मूल्यों के आर-पार महत्त्व और संबंध तथा परिणामों जो उनसे भिन्न रूप से सामने आते हैं, का बोध कराते हैं। रूपांतरों ने विभिन्न समाजों में अपनी निजी विशिष्ट छाप छोड़ी। इनमें से कुछ समाजों ने दूसरों के संबंध में कतिपय रूपांतरों की महान् सापेक्षता का प्रदर्शन किया। उदाहरणार्थ, नए उदारवाद ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर और कई वर्षों तक आज़ादी के बाद देश की नीतियों पर भारी प्रभाव कायम किया। विभिन्न देशों की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और उनकी संवैधानिक, विधिक और राजनीतिक अभिव्यक्तियों ने इनमें से कुछ रूपांतरों को घरेलू बना दिया जिससे उनकी उदारवादी परम्पराएँ बड़े तौर पर स्वदेशी बन गईं।

10.4.5.2 संयुक्त राज्य अमेरिका में उदारवाद

उदारवाद के अमेरिकी रूपांतर ने विचारों के कतिपय विशिष्ट निकाय को सामने रखा, जिसने वर्षानुवर्ष उदारवाद के विभिन्न रूपांतर जो प्रचलित हो गए थे के साथ अन्तर-क्रिया की। संयुक्त अमेरिका में, प्रतिनिधित्व का अधिकार ब्रिटेन की तरह वास्तविक नहीं था तथा यह राजनीतिक समुदाय के हितों से न जुड़कर कुल मिलाकर निर्वाचन क्षेत्र और उसके मतदाताओं की चिन्ताओं से जुड़ा हुआ था। इसके अतिरिक्त, प्रतिनिधित्व पद्धति के माध्यम से लोगों की 'बेहतर किस्म' की पहचान करने पर बल दिया गया था। संयुक्त राज्य अमेरिका में, सम्पत्ति और स्थानीय हितों पर बल देना अपेक्षाकृत अधिक मज़बूत था। इसके अलावा, शासन ने ब्रिटेन में दृश्यमान अहस्तक्षेप नीति सिद्धांत की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमेरिका में उसे अधिकाधिक प्रतिरोधवादी शर्तों पर ग्रहण किया था। उसी समय, लोकप्रिय संप्रभुता की धारणा, जिसे लोगों ने राजनीतिक समुदाय के रूप में निरंतर प्रयोग किया और उसका संरक्षण किया, संयुक्त राज्य अमेरिका में गहरे तक बैठ गई। उदारवाद की संस्थागत जटिलता पर भी विभिन्न तरीकों से ज़ोर दिया गया। विभेदक संप्रभुता जिसने स्थानीयवाद को बढ़ावा दिया और केन्द्रिकता के खतरे को कम किया, ने ब्रिटेन की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमेरिका में स्वतंत्र रूप से अधिक जोर दिया। नागरिक संघों और संयुक्त राज्य अमेरिका में उनके राजनीतिक महत्त्व का महान् फ्रैंच राजनीतिक दार्शनिक, एलेक्सिस ऐ, टॉकवी द्वारा उल्लेख किया गया। उन्होंने इसे लोकतांत्रिक तानाशाही के प्रति प्रतिभार के रूप में देखा, जिसे उन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका में संभाव्य खतरे के रूप में महसूस किया।

> ''यदि मानवों को सभ्य बने रहना है कि अथवा ऐसा होना है तो एक-दूसरे के साथ जुड़ने की कला का उसी अनुपात में संवर्द्धन और सुधार होना चाहिए जिस अनुपात में समानता की शर्तों का विस्तार होता है'', (ए.द. तौकवि, डैमोक्रेसी इन अमेरिका, न्यूयार्क, रैण्डम हाउस, पृ. 118)

अमेरिकी उदारवाद ने बहुलवाद के अपने लाक्षणिक विचार को उखाड़ फेंका। इसका तर्क था कि राज्य भी अनेक संघों में एक संघ है, जो एक विशेष समय पर व्यक्ति को कार्यरत

करता है। वही दूसरे भी संगठन हैं जिनके साथ व्यक्ति अपने हितों और वफादारियों के सापेक्षतः बँध जाता है तथा प्रत्येक संघ अपने निजी चुनिंदा क्षेत्र में उत्कृष्ट होता है। इस प्रकार, राज्य के पास कोई अधिभासी शक्तियाँ नहीं होती और उसे अन्य संघों के साथ कार्य करना आवश्यक हो जाता है।

10.4.5.3 महाद्वीपीय यूरोप में उदारवादी परम्परा

महाद्वीपीय यूरोप में उदारवादी परम्परा जटिल और परतदार है। फ्रांस में पूर्व रूसी उदारवादी परम्परा कतिपय विशिष्ट प्रबल प्रभाव वाली थी। वोल्टैयर की रचना में भाषण, विश्वास, संघ और प्रैस की विभिन्न स्वतंत्रताओं की घोषणा की गई थी। प्रकृतितंत्रवादियों ने ज़ोरदारी से बाज़ार की स्वतंत्रता का तर्क दिया। दार्शनिकों ने सभी पुरुष और महिलाओं के एक बंध के द्वारा संयुक्त करने की युक्ति पर बल दिया। फ्रांस में एक शक्तिशाली नागरिक-गणतांत्रिक परम्परा भी थी, जिसने कई बार उदारवादी प्रतिष्ठानों और कार्यवृत्तों से हाथ मिलाया।

रूसो की सम्पूर्ण लोकतंत्र की संकल्पना और वह सम्बन्ध जो उन्होंने इसके और स्वतंत्रता के बीच स्थापित किया, गुटों और हितचिंतक ग्रुपों के गठन के प्रतिकूल हो गए। गुटों ने हिमायती संस्थाओं का समर्थन किया और वे आमराय का वास्तविक इच्छा के साथ सामंजस्य नहीं बिठा सके। फ्रैंच राज्य जिसे आमराय का धारक माना गया था, नागरिकों के साथ सीधा संबंध रखने वाला माना गया था। नागरिकों और राज्य के बीच अन्य कोई हित नहीं थे। उसके प्रतिकूल, अमेरिकी शैली का बहुलवाद ऐसे हितों के दावे के साथ फला फूला था।

महाद्वीप के अन्य हिस्सों में उदारवाद ने प्रबलतापूर्वक बुद्धिवादियों की अधिछवि ग्रहण की। जर्मनी में यह स्थिति विशेष रूप से थी। इसे राजतंत्र संघीय विघटन के विरूद्व निर्देश दिया गया और गिरजाघर का विश्वाशों और नैतिक चरित्र पर प्रभुत्व।

परम्परा और राष्ट्रवाद के बीच संबंध उभयभावी बना रहा। जब उदारवाद ने स्वँयमेव संघीय विघटन का निर्देश देते हुए। स्वँयमेव राजतंत्र और गिरजाघर को समेकित किया, यह प्रायः राष्ट्रवाद के साथ गया और इसने उदारवाद के रूपांतर को समेकित किया जिसे उदारवादी कहा गया। परन्तु, गिरजाघर और परम्परागत हितों द्वारा समर्थित राष्ट्रवाद का एक रूप उभरा जिसने स्वँयमेव उदारवादी राष्ट्रवाद के विरुद्ध निर्देश दिया।

10.4.5.4 भारत में उदारवादी परम्परा

भारत में एक उदारवादी धरोहर है जो अब से लगभग 200 वर्ष पहले से चली आ रही है। इस परम्परा में कुछ विशिष्ट चरण हैं। इसने भारत में राष्ट्रीय परियोजना के अंतरंग के रूप में सामाजिक सुधारों का आह्वान किया, जिसे उसी समय उदारवादी के रूप में स्वीकार कर लिया गया। भारत में उदारवादियों का तर्क था कि देश में विद्यमान सामाजिक संस्थाएँ अधिकारों और स्वतंत्रताओं की प्राप्ति के लिए प्रेरक नहीं थीं। सामाजिक सुधारों का उद्देश्य जाति प्रथा और लिंग संबंधों में सुधार करना था। उन्होंने स्वँयमेव प्रचलित बुराइयों जैसे सतीप्रथा, विधवाओं के पुनर्विवाह पर रोक और निरअक्षरता के विरुद्ध निर्देश दियां। भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के विपरीत भारतीय उदारवाद ने उत्साह से संवैधानिक सुधारों की मांग की। संवैधानिकवाद भारत में उदारवादी परियोजना का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ बन गया। उदारवादियों ने भारत में अस्पृश्यता के अस्तित्व पर दोषारोपण किया और उसके तत्काल उन्मूलन की माँग की। वे एक शासकीय परिसर के पक्ष में थे जहाँ सत्ता विभिन्न अंगों के बीच आबंटित और विकेन्द्रीकृत, दोनों हों। धर्मनिरपेक्षवाद भारत में उदारवादी

परियोजना के लिए अंगभूत था। इसने माँग की कि धर्म को राज्य के कार्यों के साथ न जोड़ा जाए, किसी धर्म को दूसरे धर्म के ऊपर प्राथमिकता न दी जाए और राज्य धार्मिक मामलों में तटस्थ बना रहे। तदनुसार, सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार भी भारत में उदारवादी धरोहरों में जड़ जमाए हुए हैं।

भारत में उदारवादी परियोजना में एक मज़बूत राज्य अन्तर्ग्रस्त था, जिसने नागरिकों और समूहों को उन उद्देश्यों और मूल्यों का अनुसरण करने के योग्य बनाया, जिन्हें उन्होंने अपना निजी माना और जो उनकी परियोजना के अधिकांश लक्षणों के अनुरूप थे। ऐसा राज्य शक्तियों के विभाजन और वितरण तथा उनके विकेन्द्रीकरण और भारत की महान् विविधता को दुहरा करने के लिए ताना-बाना बुनने में उलझ गया। नागरिकों के साथ समान व्यवहार को ग्रुपों और समुदायों के विभेदीकृत (Preferential) माना गया; उन ग्रुपों और समुदायों के साथ व्यवहार जिसे एक प्रकार या अन्य प्रकार से नुकसान उठाना पड़ा।

भारत में उदारवादी परियोजना राष्ट्रवाद और लोकतंत्र की माँगों के साथ विषम स्थिति में विद्यमान है। इसने अपने नागरिकों से अन्य सभी को समान सम्मान देने की माँग करते हुए असाधारण माँगें की जो अपरिहार्य रूप से, विशेषकर युगों पुरानी वंशानुक्रम संबंधों और जीवन के अनन्य तरीकों के संदर्भ में विभेदक सम्मान की सूचक हैं।

भारत में उदारवादी परम्परा के विस्तार के उपरोक्त तीन मामले अंतिम नहीं हैं। तथापि, वे रंग-बिरंगे स्वागत का प्रदर्शन करते हैं जो इस परम्परा को विश्वभर में प्राप्त हुआ।

10.4.5.5 संयोजन में उदारवादी

प्रमुख तरीकों जिनसे उदारवाद को स्वीकार्य होने में सफलता मिली है, में से एक तरीका यह है कि जीवन के रंग-बिरंगे परिप्रेक्ष्यों और तरीकों को सहयोजित कर दिया जाए। 'उदारवादी सामुहिकतावाद' जैसे हाल ही में हुए संयोजनों के सापेक्षतः 'उदारवादी लोकतंत्र' और 'उदारवादी राष्ट्रवाद' जैसी व्यापक रूप से स्वीकृत व्यवस्थाओं के ऐसे संयोजनों की एक चकित करने वाली संख्या है। ऐसे सभी प्रयोगों में, शब्द 'उदारवादी' के समान लक्ष्य नहीं हैं। अपितु, इसने गहनरूप से संदर्भयुक्त अर्थ प्राप्त किया हुआ है।

बोध प्रश्न 3

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जांच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) राज्य के संबंध में क्लासिकी उदारवाद और नए उदारवाद के बीच अंतर तीन वाक्यों में लिखें।

.....

.....

.....

.....

2) निम्नलिखित मुद्दों के संबंध में उदारवादियों के अभिगम पर दो वाक्य लिखें :

i) लोकहितकारी राज्य ii) बहुमत का शासन

iii) निजी सम्पत्ति iv) बाज़ार

3) उदारवादी परम्परा के लिए जॉन रॉल्स के तीन महत्त्वपूर्ण योगदानों पर चर्चा करें।

i)

ii)

iii)

4) अमेरिकी उदारवाद के तीन लाक्षणिक स्वरूपों की पहचान करें।

i)

ii)

iii)

5) उदारवादी परम्परा के चार लक्षण लिखें जो भारत में प्रचलित हुए।

.....

.....

.....

.....

.....

10.5 मार्क्सवादी परम्परा के रूपान्तर

उदारवादी परम्परा की तरह मार्क्सवादी परम्परा की भी अनेक विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ हैं, क्योंकि इसने बदलते हुए संबंधों के विशाल निकाय को प्रतिपादित और स्पष्ट किया तथा यह विशिष्ट और असमान रूप से विकसित समाजों पर लागू की गई। इस परम्परा के निम्नलिखित रूपांतर उल्लेखनीय हैं :

10.5.1 मार्क्सवाद

मार्क्सवाद विचार और समाज के उस निकाय का हवाला देता है जिसके 19वीं शताब्दी के द्वितीय अर्द्धशतक से पूँजीवाद समाज के विरुद्ध निर्देशित सुधारवादी बल सामने आये। इन सुधारवादी बलों का प्रमुख मज़दूर वर्ग था। कार्ल मार्क्स (1818-1883) ने इस विचार के केन्द्रीय को अभिव्यक्ति दी तथा उभरते हुए समाजवादी आन्दोलन को मूर्त्त रूप दिया। उनके दोस्त और साथी, फ्रीडरिच एंजिल्स (1820-1895) इस प्रयास में उसके जीवन भर भागीदार रहे।

विचार के एक प्रकार के रूप में, मार्क्सवाद जर्मन आदर्शवाद, ब्रिटेन में संकेन्द्रित अर्थव्यवस्था और काल्पनिक समाजवाद के विभिन्न प्रकारों, समालोचना करके प्रतिपादित किया गया था। कि जो अलग-अलग समय पर प्रचलित रहे। इसने वैज्ञानिक समाजवाद होने का दावा किया और तर्क किया कि समाजवादी प्रथा सम्पूर्ण पूँजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध निर्देश देती है और इसका केवल श्रमजीवी वर्ग द्वारा नेतृत्व किया जा सकता है। इसने विकासों का निरूपण किया जिनके कारण पूँजीवादी विधि से उत्पादन हुआ, इसको सूचना देने वाले विभिन्न संबंधों को अलग-अलग किया तथा इन संबंधों का कायाकल्प करने में मज़दूर वर्ग की भूमिका का सुझाव दिया। पूँजीवाद के असमान विकास की स्थिति में, इसने विभिन्न देशों में मज़दूर वर्ग की भूमिका को भिन्न-भिन्न प्रकार से देखा। कुछ मामलों में, यह

लोकतांत्रिक क्रांति के लिए गठबंधन का मुखिया हो सकता था और कहीं और, समाजवादी क्रांति के गठबंधन का।

मार्क्स ने अपनी सामाजिक बोधगम्यता को एक विशिष्ट दार्शनिक और ज्ञानमीमांसीय, आधार पर आगे बढ़ाया जिसे उन्होंने *भौतिकवादी द्वंद्ववाद* पुकारा और जिसे लोकप्रियता से *द्वंद्वात्मक भौतिकवाद* के रूप में जाना जाता है। उन्होंने 'स्व' (Being) और सोच के मध्य भेद किया और उत्तरवर्ती के मुकाबले पूर्ववर्ती को प्राथमिकता दी। इस परिप्रेक्ष्य की कुछ लक्षणात्मक विशेषताएँ इस प्रकार थीं : सत्ता का रूप अन्तर्सम्बन्धित परन्तु विरोधाभासी है। वास्तविकता का अन्तर्सम्बन्धित और विरोधाभासी लक्षण अपनी विभेदक और असमान अभिव्यक्तियों को प्राप्त कर लेता है और इसके रूपांतर का मार्ग प्रशस्त करता है। रूपांतरण दो प्रकार के होते हैं : प्रथम परिमाणात्मक है, जिसमें वास्तविकता का मूल लक्षण परिवर्तित नहीं होता है। दूसरा सत्ता के मूल लक्षण को बदल देता है, क्योंकि सत्ता के गठन के आंतरिक विरोधाभास उभर आते हैं और इसका नए सिरे से पुनर्गठन होता है। तथापि, नये विरोधाभास उस समय भी होते हैं जब परिमाणात्मक परिवर्तन होता है। वस्तु के गठन में होने वाले विरोधाभासों के प्रकार की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, अपितु उसे जानने की आवश्यकता होती है। लेनिन ने बाद में इसे ''सजीव स्थिति का सजीव विश्लेषण'' का नाम दिया।

मार्क्स ने मानवीय सत्ता को इस प्रक्रिया में स्वयमेव श्रम करते हुए, सृजन करते हुए और मनोरंजन करते हुए देखा। अपने श्रम से, मानव सूचनात्मक रूप से स्वयं को प्रकृति के साथ उलझाता है और दूसरे मानवों के साथ संबंध बनाता है, साहचर्य और कामासक्त। जब तक उत्पादक बल कम विकसित थे, प्रत्येक को उत्पादक रूप से व्यस्त होना पड़ा, ताकि अपनी जीविका में वृद्धि कर सकें। तथापि, उत्पादन के साधनों के विकास से श्रमिक वर्ग की उत्पादकता में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप तत्काल आवश्यकताओं के अतिरिक्त फालतू उत्पादन हुआ। तथापि, इस फालतू उत्पादन का एक निश्चित सामाजिक समूह द्वारा विनियोग किया गया। परिणामस्वरूप, उत्पादन करने वालों और फालतू उत्पादन का विनियोग के बीच वर्ग संबंध और प्रतिद्वंद्वी वर्ग बने। मार्क्स और एंजिल्स ने कतिपय अन्य विरोधाभासों जैसे शारीरिक और मानसिक श्रम के बीच तथा शहर और गाँव के बीच, को असमाधेय रूप से उपरोक्त विरोधाभासों के साथ जुड़ा हुआ पाया। समाज में प्रतिद्वंद्वी वर्ग होने पर, राज्य प्रतिद्वंद्वी वर्ग पर नियंत्रण रखने के लिए उभरकर सामने आता है और उसके द्वारा समाज का पुनर्निर्माण किया जाता है। तथापि, इस तथ्य के होते हुए कि समाज का पुनर्निर्माण कतिपय अभिमानी रिश्तों के आधार पर होता है, राज्य अभिमानी वर्गों के बराबर योग्यता वाली एजेंसी बन जाता है।

मार्क्स का तर्क है कि विभिन्न समाज उस समय उत्पादन के अनेक तरीकों से गुजरे हैं, जब तक पूँजीवाद का उदय नहीं हुआ। उत्पादन की स्थिति उस अर्थव्यवस्था से निर्मित होती है जो उत्पादक बलों के विशिष्ट संयोग और उत्पादों के बीच संबंधों अथवा उत्पादन संबंधों से बनी होती है। राजनीति, कानून, धर्म और संस्कृति के क्षेत्र अंतरंग रूप से आधार से जुड़े होते हैं और इसके द्वारा मूर्त्तिमान होते हैं। वह उन्हें अधिरचनाएँ मानते हैं। *ए कंट्रीब्यूशन टू द क्रिटिक ऑफ पॉलिटीकल इकॉनॉमी* की अपनी प्रस्तावना में, वह कहते हैं :

> ''अपनी सत्ता के सामाजिक उत्पादन में, मनुष्य अपरिहार्य रूप से कतिपय संबंध जोड़ता है जो अपनी इच्छा के लिए स्वतंत्र होते हैं, नामतः उत्पादन के भौतिक बलों के विकास में एक दी हुई स्थिति के उपयुक्त उत्पादन के संबंध। उत्पादन के इन संबंधों का सम्पूर्ण मिलन समाज की आर्थिक संरचना, वास्तविक आधार, का गठन करता है जिसके ऊपर एक विधिगत और राजनीतिक अधिरचना उद्‌भूत होती है और जिसके प्रति

सामाजिक चेतना के निश्चित स्वरूप प्रतिक्रिया करते हैं'' (के. मार्क्स, *ए कंट्रीब्यूशन टू द क्रिटिक ऑफ पॉलिटीकल इकॉनॉमी*, मॉस्को प्रोग्रेस पब्लिकेशन, 1970, पृष्ठ 20)।

मार्क्स का तर्क है कि उत्पादन की विशिष्ट स्थिति में पकड़े गए सामाजिक अधिकर्ता उत्पादक बलों के विकास के लिए कार्य करते हैं। तथापि, जब यह प्रचलित उत्पादन संबंधों के भीतर करना संभव नहीं होता है, वहाँ वे उत्पादन संबंधों को बदलने के लिए अग्रसर होते हैं, जिससे अवक्षेपक क्रांतिकारी रूपांतरण होता है।

मार्क्स के लिए पूँजीवाद प्रतिद्वंद्वी वर्ग संबंधों की अंतिम मुद्रा है। उत्पादन की यह मुद्रा उत्पादन बलों का उस सीमा तक विकास करती है, जिसे पहले सोचा न गया हो। यह एक ऐसी स्थिति भी है जो सारे विश्व को उत्पादन के दूसरी मुद्राओं के सभी विद्यमान घटकों को अपने नियंत्रण में लाते हुए संवृत्त कर लेती है। उत्पादन की इस स्थिति में मौलिक वर्ग विरोधाभास श्रमिक वर्ग और व्यापारी वर्ग के बीच है। एक पूँजीवादी समाज के भीतर अन्य वर्ग और समूह हैं। वे उत्पादन बलों के विकास के दौरान मौलिक वर्गों में नए गुण पैदा करना शुरू कर देते हैं। मार्क्स का तर्क था कि क्रांतिकारी रूपांतरण के लक्ष्य के लिए श्रमिक वर्ग अथवा किसान वर्ग में नए गुण आना आवश्यक है।

मार्क्स का तर्क था कि पूँजीवाद आवधिक संकट के लिए संदेशनशील है, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादक बलों की भारी हानि होती है। उन्होंने यह भी महसूस किया कि पूँजीवाद के विकास के साथ-साथ, मज़दूर वर्ग का विकास भी होता है जो आरंभ में उत्तरवर्ती द्वारा निर्धारित शर्तों पर सौदेबाजी करता है। तथापि, चूँकि वर्ग संबंधों में खटास आती है, मज़दूर वर्ग पूँजी द्वारा नियत शर्तों से बँधे रहने के लिए और अधिक तैयार नहीं होता। जब उत्पादक बलों का और विकास, अर्थात् राज्य को समग्र तुष्टि देने वाले कार्यों की स्थिति सुनिश्चित नहीं की जा सकती, तब राजनीतिक रूप से संगठित वर्ग विद्यमान राज्य सत्ता पर अपना आक्रमण करेगा और उसे श्रमिक वर्ग की तानाशाही से प्रतिस्थापित करेगा। इस प्रकार राजनीतिक परिवर्तन समाजवाद के चरण की शुरुआत करेगा जो पूँजीवादी संबंधों का कम मूल्यांकन करते हुए साम्यवाद के लिए मार्ग प्रशस्त करेगा।

मार्क्स ने साम्यवाद को उत्पादन के एक तरीके के रूप में देखा जहाँ उत्पादक बल सम्पूर्ण समुदाय से संबंध रखते हैं और उत्कृष्ट स्तर तक उनका विकास होता है, जिससे उसके सभी सदस्यों में प्रत्येक की माँगें पूरी हो सकें। इससे मानव सत्ता उस प्रकार के कार्य को करने के लिए स्वतंत्र होती है जिसे करने में उन्हें आनन्द आता है और उसे जीवन की प्रथम आवश्यकता के रूप में मानते हैं। इस प्रकार का समाज, उनके अनुसार ''प्रत्येक की अपनी क्षमता के अनुसार, प्रत्येक के लिए उसकी आवश्यकता के अनुसार'' सिद्धांतों से नियंत्रित होता है। मार्क्स को सोचना था कि जब तक मज़दूर की आवश्यकता रहेगी, स्वतंत्रता नहीं आ सकती। मात्र साम्यवाद से ही मनुष्य सच्चे अर्थों में स्वतंत्र हो सकता है।

साम्यवाद केवल इस प्रकार के युगों पुराने विरोधाभासों को समाप्त कर प्राप्त किया जा सकता है, जैसे शहर और गाँव तथा शारीरिक और आर्थिक श्रम। इससे श्रम का विभाजन समाप्त होगा। मार्क्स का विचार था कि साम्यवाद से समुदाय का विघटन होने के साथ समाज का उत्कृष्ट विकास होगा।

मार्क्सवाद ने उस समय विद्यमान समाजवाद की गंभीर समालोचना की माँग की जो उनके अनुसार यूरोपीयन आदर्शों पर आधारित था। इसके लिए क्रांतिकारी पृथा संकल्प का कार्य नहीं है और इसे यूँ ही, कभी भी आरंभ नहीं किया जा सकता। इसके लिए उचित सामाजिक हालातों की परिपक्वता की आवश्यकता होती है। तथापि, वर्ग स्वँयमेव किसी समाज के विरोधाभासों का प्रतिफल और विस्तार दोनों का प्रतिबिम्ब था।

10.5.2 लेनिनवाद

मार्क्सवादी विचारों के आधार पर, सामाजिक दल कभी-कभी विद्यमान दलों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए आगे आए, ये दल क्रांतिकारी परिवर्तन के द्वारा विद्यमान सामाजिक रिश्तों के तीव्र रूपांतरण के लिए कटिबद्ध थे। संयोगवश, इस चरण पर उदारवादी लोकतंत्र भी श्रमिकों के लिए एक बड़ी संख्या में अधिकारों को प्रदान कर रहे थे और दिनोंदिन अन्तर्विष्ट (Inclusive) होते जा रहे थे। एक कार्य जिसका नवजात सामाजिक दलों को सामना करना था, वह था उदारवादी लोकतंत्र के साथ अपने संबंधों को परिभाषित करना था। सामाजिक दल और श्रमिक संघों द्वारा संगठित अन्दोलन, सहकारी मीडिया और चुनावों के मध्य संबंध की भी समस्या थी। इस चरण में प्रचलित पूँजी के स्वरूप में भी तीव्र परिवर्तन हुए थे। इन परिवर्तनों से मार्क्सवादी विचार निकाय किस प्रकार प्रभावित होंगे। यह समाजवादी दलों के समक्ष एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा था। 19वीं शताब्दी के अंत में तथा 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में, हम बढ़ते हुए राष्ट्रीय आंदोलनों को देखते हैं जो अपनी राष्ट्रीयता के लिए संघर्ष कर रहे हैं। इन राष्ट्रवादी संघर्षों के साथ सामाजिक आंदोलन के रिश्तों का अभी आंकलन करना था; और अंततः चूँकि समाजवाद विश्वभर में पूँजीवाद के द्वारा असमान स्वरूप ग्रहण कर रहा था, क्रांति की स्थिति तथा उसके लिए उचित रणनीति विचार हेतु महत्त्वपूर्ण मुद्दे थे।

इन चुनौतियों के सामने, हम सुधार की एक प्रबल लहर जो समाजवादी आंदोलन के भीतर विकसित हो रही थी को पाते हैं, जिसको इस आंदोलन के आरंभ में एक महत्त्वपूर्ण विचारक और जर्मन समाजवादी दल के नेता एडवर्ड बर्नस्टीन ने अभिव्यक्ति प्रदान की। उन्होंने मार्क्सवाद के सुधार की माँग की क्योंकि इसके अधिकांश सिद्धांत पुराने हो गए थे। उसने श्रमिकवादी अन्तर-राष्ट्रीयवाद पर प्रश्नचिह्न लगा दिया और मज़दूरों को राष्ट्र राज्य के भीतर शामिल करने की माँग की। वह अपने दल से आन्दोलन का नेतृत्व कराना नहीं चाहते थे, अपितु जर्मन समाजवादी दल ने समाजवादी क्रांति को उदारवादी लोकतांत्रिक क्रांति की कार्यसूची की निरन्तरता और उसके फैलाव के रूप में देखा।

लेनिन ने इस स्थिति में हस्तक्षेप किया और इन सभी प्रश्नों के लिए एक चारित्रिक जबाव तैयार करने का प्रयास किया। लेनिन ने श्रमिक वर्ग के क्रांतिकारी लक्ष्य से उदारवादी लोकतंत्र को अलग किया तथा तर्क दिया कि श्रमिक वर्ग स्वँयमेव उदारवादी लोकतंत्र के फ्रेमवर्क का विस्तार करके अपना उद्धार नहीं कर सकती। उन्होंने उदारवादी लोकतंत्र के रूप से संबंध विच्छेद का आह्वान किया। उनकी सुप्रसिद्ध रचना *ह्वाट इज टू बीडन* में, उन्होंने तर्क दिया कि श्रमिक वर्ग का आंदोलन समाजवादी दल के नेतृत्व के बिना पूँजीवाद के चक्र में फँस जाएगा। अतः उन्होंने आंदोलन से एक स्वायत्त दल की माँग की जो कुल मिलाकर मज़दूर वर्ग के आंदोलन को क्रांतिकारी नेतृत्व प्रदान करने में सक्षम हो। लेनिन ने स्वीकार किया कि पूँजीवाद के स्वरूप में भारी परिवर्तन हुए थे। ऐसे परिवर्तन मार्क्स को उस समय उलब्धता नहीं थे जब उन्होंने पूँजीवाद पर लिखा। तथापि, पूँजीवाद पर मार्क्स के विचारों पर अर्हता प्राप्त करने के स्थान पर, उन्होंने तर्क दिया कि इन परिवर्तनों ने मार्क्स के विश्लेषण की पुष्टि की। उन्होंने पूँजीवाद में हो रहे महान् परिवर्तनों को साम्राज्यवाद का नाम दिया, जिसने उसमें अंतर्निहित विरोधाभासों के कारण क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए दरवाज़े खोल दिए। लेनिन ने प्रपीड़ित राष्ट्रीयताओं और प्रपीड़क राष्ट्रवाद के बीच अंतर किया। उनका तर्क था कि प्रपीड़ित राष्ट्रीयताएँ प्रभावी राष्ट्रवाद के विरुद्ध संघर्ष कर रही हैं और ये साम्राज्यवाद एजेंट है। अतः, उन्होंने मज़दूर वर्ग के नेतृत्व वाले क्रांतिकारी आंदोलन और प्रपीड़ित राष्ट्रीयताओं के बीच भूमंडलीय एकता का आह्वान किया।

लेनिन का तर्क था कि पूँजीवाद के असमान विस्तार से सजीव स्थिति जो एक क्रांतिकारी आंदोलन प्रत्येक देश में झेलता है, के सजीव विश्लेषण की आवश्यकता थी। उन्होंने रूस

लिए के एक ऐसा विश्लेषण भेजा और रूस के लिए क्रांतिकारी निरूपण का पुनः मसौदा तैयार किया। साम्राज्यवाद के उनके विश्लेषण के आधार पर, लेनिन ने तर्क दिया कि यद्यपि रूस पश्चिमी यूरोप की तरह औद्योगिकीकृत नहीं हुआ था और कुल जनसंख्या में मज़दूरों का अनुपात कम था, रूस में उत्पादक बलों के और आगे विकास की कोई संभावना नहीं थी। यह साम्राज्यवादी नेटवर्क में अधिकाधिक अन्तर्विष्ट किया जाएगा। उन्होंने साम्राज्यवाद की कड़ी में रूस को सबसे कमजोर सम्बन्ध माना क्योंकि सभी विरोधाभास वहाँ केन्द्रित थे : यहाँ कृषक क्रांति नहीं हुई थी; इसका बुर्जुआ वर्ग कमजोर था; इसके राज्य तंत्र कुलीनतंत्रवादी थे; नागरिक स्वतंत्रताएं कम थी और यह राज्य विदेशी पूँजी पर बुरी तरह निर्भर था जबकि उसी समय इसने महान् सत्ता होने की महत्त्वाकांक्षाओं का पोषण किया।

लेनिन ने देखा कि बुर्जुआ वर्ग आन्दोलन के विकास और साम्राज्यवाद की माँगों के तहत अपने उदारवादी दावों को ध्वस्त कर रहा था। इसके कारण उसने विद्यमान राज्य उपस्करों को हिंसात्मक रूप से उखाड़ फैंकने की आवश्यकता पर बल दिया, जिससे मज़दूर वर्ग द्वारा शक्ति के प्रयोग का अवसर मिल सके।

लेनिन ने उदारवादी प्रयास के अधीन प्रभावित राजनीतिक सत्ता के संस्थानीकरण के उपायों को नकार दिया। उन्होंने महसूस किया कि उसके प्रतिनिधित्व के तरीके, सत्ता का पृथकीकरण और आवधिक चुनाव राजनीतिक सत्ता से जनसाधारण को अलग रखने के लिए अभिप्रेत थे। उन्होंने तर्क दिया कि सोवियत साम्राज्यवाद के अधीन सत्ता के अंग होने चाहिए। सभी शक्तिओं को सोवियत में संकेन्द्रित होना था और क्रांतिकारी जन समुदाय को अपने कार्यों के संचालन में सीधा संबंध बनाना चाहिए। विकेन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था का समर्थन किया जहां लघु उद्योग बड़े उद्योग का स्थान लेगा। उन्होंने तथापि, जब विकेन्द्रीकरण और लालफीताशाहीकरण ने क्रांतिकारी लाभों को खा लेने की आशंका दिखाई, लेनिन ने श्रमिक-कृषक गठबंधन के स्वायत्त संगठन का आह्वान किया जिससे क्रांतिकारी जवाबदेही की प्रक्रियाओं पर काबू पाया जा सके। इन अभिगमों में विरोधाभासी उदाहरण थे, जिसे उभरते हुए रूसी राज्य के क्रांतिकारी के विश्वास से आगाह कराना था।

10.5.3 माओवाद

माओ-जे-डाँग ने उपनिवेशों और उपनिवेशवादी प्रभुत्व के अध्यधीन लोगों के परिप्रेक्ष्य में क्रांतिकारी परिवर्तन पर मौलिक प्रश्न उठाए। आमतौर पर उपनिवेशी प्रभुत्व ने अपने समर्थन में सामाजिक आधार के रूप में संघवाद तथा प्रतिक्रियावादी बलों के समर्थन को सूचीबद्ध किया। उपनिवेशों में पूँजीवाद का थोड़ा बहुत स्वायत्त विकास हुआ था। उसमें मात्र शक्तिहीन बुर्जुआ वर्ग ही नहीं था, अपितु अपेक्षाकृत नगण्य श्रमिक आधार भी था। उन हालातों में एक बुर्जुआ वर्ग का एक विशिष्ट क्षेत्र उभरा जिसने स्वँयमेव साम्राज्यवादी पूँजी का मध्यस्थ होने के नाते पालन-पोषण किया। माओ ने इसे कॉम्प्रेडोर बुर्जुवा का नाम दिया। इसके अतिरिक्त, उपनिवेशवादी प्रभुत्व के स्वरूप के बारे में मतभेद थे, कुछ पूर्णरूपेण उपनिवेश तथा शेष अर्द्ध-उपनिवेश थे। माओ ने उपनिवेशवाद के तहत संस्कृति के मुद्दे पर ध्यान आकर्षित किया जिसमें प्रजा के लोगों की भाषायी जड़ें, विश्वास और आदतें साम्राज्यवादी संस्कृति के अंतर्गत सीमान्तीकरण तथा अधीनता के अध्यधीन थे।

उन्होंने तर्क दिया कि इन समाजों में क्रांतिकारी कार्य का स्वरूप एक नए प्रकार के लोकतंत्र को सामने लाना था, जिसे उन्होंने 'नए लोकतंत्र' (New Democracy) का नाम दिया। माओ के लिए, यह नागरिक मध्यस्थता का बदल हुआ स्वरूप था। उन्होंने महसूस किया कि इस क्रांति से जनसमुदाय को युगों पुराने बंधनों से मुक्त हो जाना चाहिए, जो अपने

निजी बंधन मुक्ति का मार्ग अवधारण करने के लिए अपनी ऊर्जा को निर्मुक्त करने तथा अपनी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए अध्यधीन थे। इसके लिए एक राष्ट्रवादी संस्कृति बनाम साम्राज्यवादी संस्कृति को प्रोन्नत करने के लिए सचेत प्रयास अपेक्षित था।

ऐसा क्रांतिकारी परिवर्तन कौन कर सकता है? माओ का तर्क था कि नागरिक/बुर्जुआ वर्ग चीन में इस क्रांति का नेतृत्व नहीं कर सकते हैं और पूँजीवाद के अधीन एकमात्र वर्ग जो ऐसा कर सकता है, मज़दूर वर्ग था। परन्तु चीन में औद्योगिक मज़दूर वर्ग की उपस्थिति के कारण, यह तभी संभव हो सकता है जब इसे दृढ़ता के साथ ग़रीब किसान वर्ग से जोड़ दिया जाए और कृषक क्रांति का नेतृत्व किया जाए। इस प्रकार, साम्यवादी दल का काम क्रांति के अग्रणी के रूप में कृषक क्रांति लाना था।

ऐसी खेतिहर क्रांति शहरी क्रांति पर ध्यान केन्द्रित करके नहीं लाई जा सकती है, इसके लिए ग्रामीण क्रांति की ओर जाना पड़ेगा तथा संघर्षरत खेतिहर वर्ग से हाथ मिलाना होगा। उन्होंने महसूस किया कि चीन में विद्यमान हालातों में उभरता हुआ शहरीकरण मात्र जोखिम उठाना था।

इस प्रकार की कृषक क्रांति कैसे लाई जाए? उनके अनुसार बताई गई रणनीति में क्षेत्रों को स्वतंत्र करना और स्वतंत्र क्षेत्रों की ओर बढ़ना एक दीर्घकालिक सशस्त्र संघर्ष शामिल था। आरंभिक चरणों में उन्होंने शत्रु पर हमला करने के लिए गुरिल्ला तरकीबों से युद्ध करना उपयुक्त समझा।

माओ ने कृषक क्रांति की रणनीति पर काफी विस्तार से चर्चा की। इसमें स्वँयमेव भूमिहीन और ग़रीब किसानों को दृढ़ता के साथ आधार बनाना, मध्यम वर्ग के किसानों को शामिल करना तथा जहाँ तक संभव हो सके, अमीर किसानों का समर्थन प्राप्त करना शामिल थे। उन्होंने यह तर्क भी दिया कि क्रांति के शत्रु को ध्यान में रखते हुए कृषक रूपांतरण के लिए पहचाने गए मुद्दों में ये संशोधन की आवश्यकता थी।

अतः एक प्रमुख परिवर्तन जिसकी माओ ने घोषणा की यह थां क्रांतिकारी दृश्य का शहरी क्षेत्रों से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर स्थानांतरण; मज़दूर-कृषक गठबंधन की नयी धुरी की स्थापना चला और कृषक रूपांतरण के लिए विशेष रणनीति का सुझाव दिया गया।

माओ का तर्क था कि नए लोकतंत्र की स्थापना के लिए इस प्रकार की रणनीति प्राप्त करने के लिए कतिपय चालकीय बाह्य शर्तों की आवश्यकता थी। उन्होंने महसूस किया कि सोवियत संघ का अस्तित्व ऐसी ही शर्त थी। अन्यथा, कृषक स्वरूप विरोधी बलों द्वारा दबा दिया जाता। माओ के लिए, नया लोकतंत्र उदारवादी लोकतंत्र की तुलना में लोकतंत्र का एक भिन्न स्वरूप था। उदारवादी लोकतंत्र का रुझान पूँजीवाद की तरफ था। जबकि नये लोकतंत्र का रुझान समाजवाद की तरफ था। नया लोकतंत्र साम्राज्यवाद की शर्तों के अधीन उपनिवेशों/अर्धउपनिवेशों के लिए उचित स्वरूप था और यह समाजवादी पूँजीवाद के लिए समर्थक शर्तों का सृजन करेगा।

माओ का द्वितीय प्रमुख नवीकरण, समाजवादी रूपांतरण की बोधगम्यता में अन्तर्निहित है। इस संबंध में वह महत्त्वपूर्ण रूप से रूसी आदर्श से अलग हो गये। उनका तर्क था कि समाजवाद के अधीन, प्राथमिकता मात्र उत्पादक बलों के विकास की बजाए उत्पादन संबंधों के रूपांतरण में अन्तर्हित होनी चाहिए। समाजवाद पूँजीवाद और साम्यवाद के लिए संक्रमण स्थिति है। इस सम्पूर्ण चरण के दौरान, पूँजीवादी दिशा और साम्यवादी दिशा के बीच वर्ग संघर्ष है। यह संघर्ष मात्र पुराने पूँजीवादी रिश्तों के पुनरुत्थान के लिए नहीं किया जाना चाहिए। अपितु, पूँजीवादी रिश्तों के विरुद्ध, जो अविचल रूप से समाजवाद की विरोधाभासी स्थिति से उभरती है।

उनका तर्क था कि विद्यमान सरकार, दल अथवा सामाजिक रिश्तों में सार्वजनिक कार्यों के ऊपर अपने प्रत्यक्ष और सामूहिक नियंत्रण का दावा विकास की अपेक्षा, शक्ति के प्रश्न पर ही होनीाचाहिए। सांस्कृतिक क्रांति समाजवाद के निर्माण के लिए समाजवाद की शर्तों के अधीन एक राजनीतिक क्रांति के रूप में देखा गया।

माओ ने तर्क दिया कि समाजवाद के विकास को पूँजीवाद विकास के प्रतिबिम्ब के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए जनसमुदाय के पीछे निष्क्रिय प्रक्रिया को खोलते हुए। यह ऐसी प्रक्रिया होनी चाहिए जिसमें जनसमुदाय प्रत्यक्ष रूप से भागीदार बनेगा और विकास का रास्ता तय करेगा। जनसमुदाय की मुक्त सृजनता को समाज से खुली अभिव्यक्ति प्राप्त होनी चाहिए और उसे लालफीताशाही रूप के अध्यधीन नहीं होनी चाहिए।

उन्होंने महसूस किया कि राज्य उपस्कर (Apparatus) और विकास कार्यसूचियों को समाजवाद के अन्तर्गत प्रमुख परिवर्तन और पुनःउदीयमान होने चाहिए। यह आवश्यक है कि कृषि और उद्योग का विकास किया जाना चाहिए, परन्तु उन्हें आपस में एक-दूसरे का पोषण करने और सम्पूरन की आवश्यकता है। अतः यह अपेक्षा की गई थी कि समाजवाद के अधीन स्वयं तुष्ट तथा स्व-शासन के रूप में, कम्यून (Commune) का विकास किया जाना चाहिए तथा तदनुसार उसे संसाधन तथा मान्यता दिये जाने चाहिए।

माओ का तर्क था कि समाजवाद के अधीन यह आवश्यक है कि शारीरिक और मानसिक श्रम तथा शहर और गाँव के बीच अन्तर खत्म किया जाना चाहिए। श्रमिक अभियान इसलिए आरंभ किए गए थे जिससे प्रशासन और पेशा करने वाले कुछ घंटे तक शारीरिक श्रम कर सकें।

माओ के लिए, सांस्कृतिक क्षेत्र समाजवाद के अंतर्गत बहुत निर्णायक को चुका था, अर्थात् यह साम्यवाद की गति निर्धारित करता था, जोकि इस पर निर्भर था कि इसे कितना महत्व दिया गया।

उन्होंने महसूस किया कि कन्फ्यूशस के मध्यमार्गीय मूल्य अतिवादियों का संतुलन बनाने के लिए अभिप्रेत थे, ना कि क्रांति के मज़बूत करने के लिए।

इन विचारों से चीन में विस्तृत विक्षोभ हुआ। माओ में अभिव्यक्त क्रांतिकारी जोश डैंग ज़ियाओ पिंग द्वारा आरंभ किए गए आधुनिकीकरण की नीति से माओ की मृत्यु के बाद, नियंत्रित किया गया।

10.5.4 अन्य मार्क्सवादी रूपान्तर

मार्क्सवाद ने कई अन्य रूपांतर दिए जो मुद्दों के सीमित अथवा अधिक व्यापक समाधान के साथ अनेक देशों में विशिष्ट परंपराओं के रूप में अभी तक कायम हैं। इनमें से कुछ प्रस्ताव सैद्धांतिक स्तर पर ही बने रहे और वे कभी भी प्रभावी रूप से अमल में नहीं ला सके।

10.5.4.1 पाश्चात्य मार्क्सवाद

विद्धानों ने पाश्चात्य मार्क्सवाद की एक विशिष्ट परंपरा की कुछ पहचान की है। तथापि, यह बुद्धिजीवियों, राजनीतिक दलों, विचारों के रुझान, मज़दूर वर्ग क्रांतिकारी पहलों और पूर्ण पहलवाजिओं और व्यष्टिगत साक्ष्यों के एक रंग-बिरंगे निकाय की रचना का संगठन है। इसकी धरोहर गहरे तक विखंडित, विरोधपूर्ण और विरोधाभासी भी है। जहाँ इसने चुनावों, जनसमुदाय के आंदोलनों और सशस्त्र विद्रोहों के माध्यम से सत्ता हथियाने का प्रयास किया है, इसका प्रमुख निवेश बौद्धिक और नागरिक प्रवृत्तियों को आकृति प्रदान

करना तथा पूँजीवाद की स्थायी समालोचना विकसित करने में सन्निहित है। इस परंपरा के कुछ महत्त्वपूर्ण संवाददाता/प्रवक्ता हैं– रोज़ा लक्समबर्ग और कार्ल लीबनेएट, जॉर्ज लुकाक्स और कार्ल कॉर्श, एंटोनिओ ग्राम्सी और ज़ौं पॉल सात्र, थिओडॉर एडोर्नो और हरबर्ट मार्क्यू, वॉल्टर बैंजामिन और बर्टोल्ड ब्रेट तथा हाल के वर्षों में, लुईस एल्थूज़ैर, माइकल फूंको और यूर्गे हैबरमास। इससे भारी संख्या में इस विचार के विभिन्न विद्यालय खुल गए हैं जैसे कॉंसिल कम्यूनिज़्म, ऑस्ट्रो-मार्क्सिज़्म, द फ्रैंकफर्ट स्कूल और स्ट्रक्चरल मार्क्सिज़्म। इस परम्परा के कुछ क्षेत्रों में लियॉन ट्रॉट्स्की का सुस्पष्ट प्रभाव है। हाल के वर्षों में क्रांतिकारी महिलावाद इस परम्परा में एक महत्त्वपूर्ण निवेश रहा है। इसकी कुछ अवस्थितियों और रुझानों में मनोविश्लेषण, विशेष रूप से सिग्मंड फ्रॉड के प्रबल अवशेष पाए जा सकते हैं। इसके कुछ महत्त्वपूर्ण लक्षण उल्लेखनीय हैं :

i) इसने सामाजिक आंदोलन के समक्ष महत्त्वपूर्ण मुद्दों के रूप में सामाजिक रिश्तों के अन्यताभाव, खपतीपने (Fetishization) और वस्तुकरण की पहचान की।

ii) वह पूँजी के प्रभाव में बुद्धिपरक कारण के हास और अवरुद्धता को लेकर काफी आशंकित हैं।

iii) इसने वर्चस्व, दमन, निग्रहता और सीमांतीकरण के विरुद्ध संघर्ष पर ज़ोर दिया। अपसंरचनाओं के संदर्भ में और विशेषकर सांस्कृतिक क्षेत्र की ओर। इसने अधीनस्थ संस्कृतियों तथा रचनात्मक संभावनाओं, जिन्हें वे वर्चस्व के विरुद्ध और पूर्व विकल्पों के उलझाव की प्रतिस्पर्द्धा में पाते हैं, की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

iv) इसने समाजवादी लोकतंत्र की प्रोन्नति के प्रति प्रबल वचनबद्धता तथा उदारवादी लोकतंत्र से शिक्षा प्राप्त करने के लिए महान् संवेदनशीलता का प्रदर्शन किया है। इसने राजनीतिक मूल्यों जैसे स्वतंत्रता और अधिकार के प्रति भारी संवेदनशीलता प्रकट की है। इसने लोकतांत्रिक मानदंडों के असम्मान तथा स्वतंत्रता और अधिकारों पर लगाए गए प्रतिबंधों के लिए कुछ समाजवादी क्षेत्रों की गहन आलोचना की है।

v) इसने पश्चिम में वैकल्पिक व्याख्याएँ प्रस्तुत करके क्रांतिकारी समाजवादी आंदोलनों की विफलता की दुर्दशा का मुकाबला करने का प्रयास किया है। एंटोनियो ग्रामसी, इटेलियन मार्क्सवादी, की रचना इस संबंध में अग्रणी बनी हुई है। वे अधीनस्थ की सहमति से अधिभावी वर्गों के वर्चस्व के मुद्दे पर खोज करते हैं। इन वैकल्पिक व्याख्याओं ने नागरिक समाज, विचारधारा और लोकप्रिय संस्कृतियों के रणक्षेत्र में हस्तक्षेत्र की ओर ध्यान आकर्षित किया है, जो मार्क्सवादियों द्वारा शुरुआती रूपांतरों में प्रस्तावित स्थिति से पर्याप्त भिन्न है।

vi) पश्चिमी मार्क्सवाद ने मज़दूर वर्ग के राजनीतिक प्रभुत्व के प्रयोजनार्थ विशाल आंदोलनों और लोकप्रिय लामबंदी पर बल दिया है। क्रांतिकारी हिंसा पर बल जो हमें लेनिनवाद और माओवाद में मिलता है, इस रूपांतर में अपेक्षाकृत कम दृश्यमान है।

10.5.4.2 लेटिन अमेरिकी उदारवाद

विकसित विश्व, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ अपने रिश्तों में प्रदर्शित पराधीनता और शोषण लैटिन अमेरिकी मार्क्सवाद में एक महत्त्वपूर्ण प्रकरण रहा है। अर्थव्यवस्था और सत्ता का स्थानीय ढाँचा जो पराधीनता और शोषण के प्रस्तुतीकरण में दुस्संधि करता है, अपनी जनश्रुति में प्रबलता से चित्रित होता है। वर्चस्व प्रणाली के प्रस्तुतीकरण में राज्य की निग्रही भूमिका के होते हुए, लैटिन अमेरिकी मार्क्सवाद ने राजनीतिक सत्ता के पथ पर कब्जा करने में अध्यधिक ध्यान दिया है। सशस्त्र संघर्ष और विरोध इस केन्द्रीयता के अपरिहार्य परिणाम रहे हैं।

लैटिन अमेरिका में कैथोलिक गिरजाघर एक शक्तिशाली मौजूदगी है। मार्क्सवादी संगठनों के तत्त्वावधान में सुधारवादी आन्दोलनों में प्रायः गिरजाघरों द्वारा तत्परता दिखाई गयी है। इस दिशा में एक प्रमुख प्रयास धर्मशास्त्र के एक रूपांतर का निर्माण करना है, जिसे 'उदारवादी धर्मशास्त्र' (Liberation Theology) का नाम दिया गया।

10.5.4.3 भारतीय मार्क्सवाद

लम्बे समय तक भारतीय मार्क्सवाद ने सोवियत तथा चीनी मार्क्सवाद से मार्गदर्शन में आश्रय लिया। तथापि, इसने निम्नलिखित मुद्दों पर अपनी निजी कोशिश करने का प्रयास किया है :

i) इसने भारतीय राष्ट्रवाद के साथ सामंजस्य बिठाने का प्रयास किया है, जिसके गठन में इसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी से विपरीत कोई विशेष भूमिका नहीं निभाई।

ii) जन आन्दोलन, विशेषकर जिन्होंने अपने उद्देश्यों के अहिंसक प्राप्ति की घोषणा की, भारतीय राष्ट्रवाद के मध्य में रहे हैं। मार्क्सवाद इस पैमाने पर मुश्किल से ही आन्दोलनों में प्रस्तुत हुआ है। भारतीय साम्यवाद इन आन्दोलनों में भली-भाँति प्रस्तुत होते समय और उनमें से कुछ को अपने नेतृत्व में अग्रणी के रूप प्रस्तुत करते समय पर्याप्त रूप से प्रतिबिम्बित नहीं हुआ है।

iii) भारतीय साम्यवाद ने संसदीय लोकतंत्र का विरोध किया और इसके समक्ष बड़ी संख्या में सैद्धांतिक मुद्दे उठाए हैं। तथापि, वर्षानुवर्ष, यह चुनावी व्यावहारिकतावाद के भीतर पूर्णरूपेण अवशोषित होने से स्वयं के बचाव का प्रयास करते समय, अपनी माँगों के प्रति स्वयं को समायोजित करता रहा है।

iv) महान् भारतीय विविधता, विकास के असमान स्तर और बहुलवाद भारतीय साम्यवाद के समक्ष उसे विभिन्न दिशाओं में खींचकर और समय-समय पर विघटन पैदा करके महान् चुनौतियाँ पेश की हैं। अब तक, इन सामाजिक वास्तविकताओं से निपटान के लिए इसने थोड़ी व्यावहारिक क्षमता का प्रदर्शन किया है, यद्यपि इसने इस प्रयोजनार्थ राजनीतिक गठजोड़ अथवा गठबंधन बनाने के लिए महान् पटुता का परिचय दिया है।

बोध प्रश्न 5

नोट : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जांच इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) मार्क्स के पूँजीवाद समाज के विश्लेषण पर संक्षेप में आठ वाक्य लिखे।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) पश्चिमी मार्क्सवाद के चार विशिष्ट लक्षण बताएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

3) ऐसे तीन मुद्दों पर चर्चा करें जिन्हें लेकर भारतीय मार्क्सवाद ने कुल मिलाकर अपना निजी रास्ता तय किया है।

.....

.....

.....

.....

.....

10.6 सारांश

उदारवादी मार्क्सवादी परम्परा ने कुल मिलाकर विश्व का जो गठन एवं पुनर्गठन किया है, अभी तक किसी परंपरा ने नहीं किया है। आमतौर पर यह विश्वास किया जाता है कि उदारवादी परंपरा मार्क्सवादी परंपरा के प्रति शत्रुभाव रखती है। इस इकाई में उन मुद्धों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है जो सर्वश्रेष्ठ हैं और उन मूल चिंतनों का जिनसे परस्पर सहयोजित परिणाम निकलते हैं। फिर भी, उदारवादी परंपरा मार्क्सवादी परंपरा से उल्लेखनीय रूप से भिन्न है और इनके प्रति बड़ा अन्याय होगा, यदि वे एक-दूसरे के साथ टकराकर समाप्त हो जाए। इस इकाई में इन परंपराओं के बीच मतभेदों पर विशेष रूप से चर्चा की गई है।

कोई एक समान उदारवादी परंपरा नहीं है। हम उदारवादी परंपरा के कई रूपांतरों के बारे में सोच सकते हैं। इस इकाई में एक तरफ उसके केन्द्रीय सिद्धांत में परिवर्तन पर आधारित कुछ महत्त्वपूर्ण रूपांतर तथा दूसरी तरफ, एक राजनीतिक समुदाय द्वारा इस परम्परा के विनियोजनों की रूपरेखा उपलब्ध कराई गई है। प्रथमतः हमने क्लासिकी उदारवाद पर विचार किया है। दूसरे, हमने अमेरिकी उदारवाद और महाद्वीपीय उदारवाद पर चर्चा की है। मार्क्सवादी परंपरा में भी समय-समय पर प्रमुख परिवर्तन हुए हैं। यह इकाई उस परंपरा की रूपरेखा जिसे मार्क्स और ऐंजिल्स ने आरंभ किया, इस धरोहर को लेनिनवादी पुनर्गठन और इस परंपरा के माओवादी रूपांतर को मुहैया कराती है। इस परंपरा के विनियोजन के संबंध में, हमने इस परंपरा के पश्चिमी यूरोपीयन, लैटिन अमेरिकी और भारतीय रूपांतरों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है।

10.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एविनेरी एस., *द सोशल एण्ड पॉलिटीकल थॉट आफ के. मार्क्स*, कैम्ब्रिज, सीयूपी, 1968।

कार्र ई.एच., *द बॉल्शेविक रिवॉल्यूशन*, लंदन, पैंग्विन, 1966।

शएन जेरोम, *माओ एण्ड द चाइनीज़ रिवॉल्यूशन*, ऑक्सफोर्ड, ओयूपी, 1965।

क्लेंडिन, एफ., *कम्यूनिस्ट मूवमेंट : फ्रॉम कॉमिनटेर्न टू कॉमिनफोर्म*, लंदन, पैंग्विन, 1975।

घोष, एस., *मॉडर्न इण्डियन पॉलिटीकल थॉट*, न्यू दिल्ली, एलाइड, 1984।

होण्डुज एन., *लेनिन'स पॉलिटीकल थॉट*, लंदन, मैकमिलन, 1977।

हार्टज़ एल., *द पॉलिटीकल ट्रेडीशन इन अमेरिका : एन इंटरप्रिटेशन आफ अमेरिकन थॉट सिंस द रिवॉल्यूशन*, न्यू यॉर्क, हार्कोर्ट, 1955।

कॅरोल के. एस., *द सैकिण्ड चाइनीज़ रिवॉल्यूशन*, लंदन, जोनाथन कैफे, 1975।

कैमिलिका डब्ल्यू., *लिबरलिज़्म, कम्यूनिटी एण्ड कल्चर*, ऑक्सफोर्ड, क्लारेंडन, 1989।

लुसिओ कोलेट्टी, *फ्रॉम रिवॉल्यूशन टू लेनिन*, दिल्ली, ओयूपी, 1978।

मैकफेर्सन सी. बी., *द लाइफ एण्ड टाइम्स आफ लिबरल डेमोक्रेसी*, ऑक्सफोर्ड, ओयूपी, 1977।

साल्वेडोरी मासिमो, *कार्ल कौत्स्की एण्ड द सोशलिस्ट रिवोल्यूशन*, लंदन, न्यू लेफ्ट बुक्स, 1979।

स्ट्रॉस एल., एण्ड आई. गोप्से, (संपादिम्त), *हिस्ट्री ऑफ पॉलिटीकल फिलोस्फी*, शिकागो, रेण्ड मेक'नॅली, 1977, (दूसरा संस्करण)।

विनथ्रोप, (सं.), *लिबरल डेमोक्रेसी थ्यौरी एण्ड इट्स क्रिटिक्स*, लंदन, क्रूम हेल्म, 1983।

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखें भाग 10.2 व 10.3

2) देखें भाग 10.2 व 10.3

बोध प्रश्न 2

1) देखें भाग 10.2 व 10.3

2) देखें भाग 10.2 व 10.3

बोध प्रश्न 3

1) देखें उप-भाग 10.4.1 और 10.4.2

2) देखें उप-भाग 10.4.3

3) देखें उप-भाग 10.4.4

4) देखें उप-उपभाग 10.4.5.2

5) देखें उप-उपभाग 10.4.5.4

बोध प्रश्न 4

1) देखें उप-भाग 10.5.1

2) देखें उप-उपभाग 10.5.4.1

3) देखें उप,-उपभाग 10.5.4.1